श्री महावीराय नमः

श्री कुशलरत्नगजेन्द्रगणिभ्यो नमः

जय गुरु हीरा

जय गुरु मान

नाणस्स सव्वस्स पगासणाए

(ज्ञान समस्त द्रव्यों का प्रकाशक है)

जैन धर्म प्रवेशिका

द्वितीय कक्षा

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड

प्रधान कार्यालय :

सामायिक स्वाध्याय भवन

प्लॉट नं. 2, नेहरू पार्क, जोधपुर-342003 (राज.)

फोन : 0291-2630490, 2636763, 2624891

email: shikshanboardjodhpur@gmail.com

website : www.jainratnaboard.com

सूत्र विभाग-

सामायिक सूत्र

1. नवकार महामंत्र

णमो अरिहंताणं,
णमो सिद्धाणं,
णमो आयरियाणं।
णमो उवज्झायाणं,
णमो लोए सव्वसाहूणं।
एसो पंच णमुक्कारो, सव्व पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं।।

णमो अरिहंताणं = अरिहन्तों को नमन। **णमो सिद्धाणं** = सिद्धों को नमन। **णमो आयरियाणं** = आचार्यों को नमन। **णमो उवज्झायाणं** = उपाध्यायों को नमन। **णमो लोए सव्व साहूणं** = लोक के सब साधुओं को नमन। **एसो** = यह। **पंच** = पाँच। **णमुक्कारो** = नमस्कार। **सव्व पावप्पणासणो** = सब पापों का नाश करने वाला है। **च** = और। **सव्वेसिं** = सब। **मंगलाणं** = मंगलों में। **पढमं** = प्रथम। **मंगलं** = मंगल। **हवइ** = है।

जैन परम्परा में नवकार मन्त्र का सर्वोच्च गौरवपूर्ण स्थान है। प्राकृत भाषा में नमस्कार को णमोक्कार कहते हैं। इसे पंच परमेष्ठी भी कहा जाता है।

जिस व्यक्ति के मन में सदा नवकार मंत्र के पवित्र भावों का चिंतन चलता रहता है, उसका अहित नहीं हो सकता।

नवकार मंत्र द्रव्य मंगल नहीं, भाव मंगल है। भाव मंगल ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदि के रूप में अनेक प्रकार का होता है। नवकार मंत्र में व्यक्ति पूजा का नहीं, गुण पूजा का निर्मल भाव है। इसमें जिन महान् आत्माओं का स्मरण किया गया है, वे दो रूपों में हैं- देव रूप में और गुरु रूप में।

राग-द्वेष और अज्ञान का क्षय करने वाले तथा संसारी आत्माओं को भव-दुःखों से मुक्त कराने वाले वीतराग एवं सर्वज्ञ, अरिहंत देव हैं।

आठ कर्मों से मुक्त निरंजन-निराकार अशरीरी प्रभु, सिद्धदेव हैं।

स्वयं ज्ञानादि पाँच आचार का पालन करते हुए दूसरों से भी जो आचार धर्म का पालन करवाए, ऐसे संघनायक साधु, आचार्य गुरू हैं।

आने वाले जिज्ञासुओं को आगम-शास्त्र का ज्ञान देकर मिथ्या मान्यताओं एवं धारणाओं को दूर करने वाले और अस्थिर आत्माओं को धर्म में स्थिर करने वाले साधु, उपाध्याय गुरू हैं।

पंच महाव्रतधारी और समिति गुप्ति का पालन करने वाले मोक्ष मार्ग के साधक साधु, गुरू हैं।

उक्त पाँच पदों को भाव-पूर्वक किया गया नमस्कार सब पापों का नाश करने वाला है। संसार के समस्त मंगलों में सर्वश्रेष्ठ मंगल होने के कारण यह नवकार मंत्र प्रथम मंगल है।

2. गुरु–वन्दन–सूत्र

तिक्खुत्तो, आयाहिणं, पयाहिणं, करेमि, वंदामि, णमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं, चेइयं, पज्जुवासामि, मत्थएण वंदामि।।

तिक्खुत्तो = तीन बार। **आयाहिणं** = दाहिनी ओर से। **पयाहिणं** = प्रदक्षिणा। **करेमि** = करता हूँ। **वंदामि** = वन्दना करता हूँ। **णमंसामि** = नमस्कार करता हूँ। **सक्कारेमि** = सत्कार करता हूँ। **सम्माणेमि** = सम्मान करता हूँ। **कल्लाणं** = आप कल्याण रूप हैं। **मंगलं** = (आप) मंगल रूप हैं। **देवयं** = (आप) देव रूप हैं। **चेइयं** = (आप) ज्ञानवन्त हैं। **पज्जुवासामि** = (मैं) आपकी उपासना करता हूँ। **मत्थएण** = मस्तक झुकाकर। **वंदामि** = वन्दना करता हूँ।

यह गुरुवंदन सूत्र है। संसार के प्राणिमात्र के मन में अज्ञान रूपी अधंकार को दूर करके ज्ञान रूपी प्रकाश को फैलाने वाले गुरू कहलाते हैं।

आध्यात्मिक साधना के क्षेत्र में गुरु का पद सबसे ऊँचा है। कोई दूसरा पद इसकी समानता नहीं कर सकता। गुरु हमारी जीवन-नौका के नाविक हैं। संसार के काम, क्रोध एवं लोभ आदि भयंकर दोषों से बचाकर हमको ज्ञान की राह दिखाने वाले, मुक्ति के मार्ग पर ले जाने वाले गुरू ही हैं। ऐसे गुरुदेव की विनयपूर्वक वंदना करना ही इस पाठ का प्रयोजन है।

3. इर्यापथिक सूत्र

इच्छाकारेणं संदिसह भगवं! इरियावहियं पडिक्कमामि इच्छं! इच्छामि पडिक्कमिउं। इरियावहियाए विराहणाए गमणागमणे, पाणक्कमणे, बीयक्कमणे, हरियक्कमणे, ओसा, उत्तिंग, पणग, दग, मट्टी, मक्कडा संताणा, संकमणे जे मे जीवा विराहिया एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया, वत्तिया, लेसिया, संघाइया, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया, उद्दविया, ठाणाओ ठाणं संकामिया, जीवियाओ ववरोविया, तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

भगवं = हे भगवन्। **इच्छाकारेणं** = मेरी इच्छा है कि। **संदिसह** = आज्ञा दीजिये। **इरियावहियं** = मार्ग में आने-जाने की क्रिया का। **पडिक्कमामि** = प्रतिक्रमण करूँ। **इच्छं** = (आज्ञा पाकर बोलता है) स्वीकार है। **इच्छामि** = चाहता हूँ। **पडिक्कमिउं** = प्रतिक्रमण करना। **इरियावहियाए** = ईर्यापथिकी की। **विराहणाए** = विराधना से। **गमणागमणे** = जाने आने में। **पाणक्कमणे** = प्राणी के दबने से। **बीयक्कमणे** = बीज के दबने से। **हरियक्कमणे** = हरी वनस्पति के दबने से। **ओसा** = ओस। **उत्तिंग** = कीड़ियों के बिल। **पणग** = पाँच रंग की काई। **दग** = सचित्त पानी। **मट्टी** = सचित्त मिट्टी। **मक्कडा संताणा** = मकड़ी के जाले को। **संकमणे** = कुचलने से। **जे** = जो। **मे** = मैंने। **जीवा** = जीवों की। **विराहिया** = विराधना की हो। **एगिंदिया** = एक इन्द्रिय वाले। **बेइंदिया** = दो इन्द्रियों वाले। **तेइंदिया** = तीन इन्द्रियों वाले। **चउरिंदिया** = चार इन्द्रियों वाले। **पंचिंदिया** = पाँच इन्द्रियों वाले जीवों को। **अभिहया** = सामने आते हुए ठेस पहुँचाई हो। **वत्तिया** = धूल आदि से ढँके हो। **लेसिया** = मसले हों।

संघाइया = इकट्ठे किये हों। **संघट्टिया** = पीड़ा पहुँचे जैसे छुआ हो। **परियाविया** = कष्ट पहुँचाया हो। **किलामिया** = खेद उपजाया हो। **उद्दविया** = हैरान किया हो। **ठाणाओ** = एक जगह से। **ठाणं** = दूसरी जगह। **संकामिया** = रखे हों। **जीवियाओ** = जीवन से। **ववरोविया** = रहित किया हो। **तस्स मिच्छा मि दुक्कडं** = वह मेरा पाप मिथ्या हो।

प्रस्तुत पाठ के द्वारा गमनागमन के दोषों का शोधन(शुद्धि) किया गया है। यतनापूर्वक गमन करते हुए भी यदि कहीं प्रमाद के वश किसी जीव को पीड़ा पहुँची हो, तो उसके लिए उक्त पाठ में चिंतन किया गया है।

4. आत्म–शुद्धि–सूत्र

तस्सउत्तरी करणेणं, पायच्छित्त करणेणं, विसोहि करणेणं, विसल्ली करणेणं, पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए, ठामि काउस्सग्गं। अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलीए, पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं, अभग्गो, अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो जाव अरिहंताणं भगंवताणं नमोक्कारेणं, न पारेमि ताव कायं ठाणेणं, मोणेणं, झाणेणं, अप्पाणं वोसिरामि।।

तस्स = उस (अपनी आत्मा) को। **उत्तरी करणेणं** = उत्कृष्ट बनाने के लिए। **पायच्छित्त** = प्रायश्चित्त। **करणेणं** = करने के लिए। **विसोहि करणेणं** = विशेष शुद्धि करने के लिए। **विसल्ली करणेणं** = शल्य रहित करने के लिए। **पावाणं कम्माणं** = पाप कर्मों का। **निग्घायणट्ठाए** = नाश करने के लिए। **ठामि** = करता हूँ। **काउस्सग्गं** = कायोत्सर्ग। **अन्नत्थ** = निम्न क्रियाओं को छोड़कर। **ऊससिएणं** = ऊँचे श्वास लेने से। **नीससिएणं** = श्वास छोड़ने से। **खासिएणं** = खाँसी आने से। **छीएणं** = छींक आने से। **जंभाइएणं** = जम्हाई आने से। **उड्डुएणं** = डकार आने से। **वायनिसग्गेणं** = अधो-वायु निकलने से। **भमलीए** = चक्कर आने से। **पित्त** = पित्त के कारण। **मुच्छाए** = मूर्च्छा आने से। **सुहुमेहिं** = सूक्ष्म रूप में। **अंग** = अंग के। **संचालेहिं** = संचालन से। **सुहुमेहिं खेल संचालेहिं** = सूक्ष्म रूप में कफ के संचार होने से। **सुहुमेहिं दिट्ठि संचालेहिं** = सूक्ष्म रूप में दृष्टि संचार से अर्थात्-नेत्र फड़कने से। **एवमाइएहिं आगारेहिं** = इस प्रकार आगारों से। **अभग्गो** = अखण्ड। **अविराहिओ** = अविराधित। **हुज्ज मे काउस्सग्गो** = मेरा कायोत्सर्ग हो। **जाव** = जब तक। **अरिहंताणं** = अरिहंत। **भगवंताणं** = भगवन्तों को। **णमोक्कारेणं** = नमस्कार करके। **ण पारेमि** = (कायोत्सर्ग को) नहीं पालूँ। **ताव** = तब तक। **कायं** = शरीर को। **ठाणेणं** = स्थिर रख कर। **मोणेणं** = मौन रख कर। **झाणेणं** = मन को एकाग्र रख कर। **अप्पाणं** = अपनी आत्मा को। **वोसिरामि** = पापकारी कार्यों (कषाय आदि) से अलग करता हूँ।

इस पाठ से कायोत्सर्ग करने का संकल्प किया जाता है। इसी भावना से यह पाठ अमुक आगारों के साथ कायोत्सर्ग करने की प्रतिज्ञा का निर्देश करता है। कायोत्सर्ग, शरीर को स्थिर, वचन को मौन तथा मन को एकाग्र रखकर किया जाता है।

5. कायोत्सर्ग शुद्धि–सूत्र

कायोत्सर्ग में आर्त्तध्यान-रौद्रध्यान ध्याया हो, धर्म ध्यान-शुक्ल ध्यान नहीं ध्याया हो तथा कायोत्सर्ग में मन, वचन और काया चलित हुए हों तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

6. लोगस्स (तीर्थंकर स्तुति) सूत्र

लोगस्स उज्जोअगरे, धम्म तित्थयरे जिणे।
अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसंपि केवली ।।1।।
उसभमजियं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे।।2।।
सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअल सिज्जंस, वासुपुज्जं च।
विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि।।3।।
कुंथुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च।
वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च ।।4।।
एवं मए अभिथुआ, विहूयरयमला पहीणजरमरणा।
चउवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु।।5।।
कित्तिय वंदिय महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा।
आरुग्ग बोहिलाभं, समाहिवरमुत्तमं दिंतु ।।6।।
चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा।
सागरवर गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।7।।

लोगस्स = लोक में। **उज्जोअगरे** = प्रकाश करने वाले। **धम्मतित्थयरे** = धर्मतीर्थ की स्थापना करने वाले। **जिणे** = जीतने वाले (रागद्वेष को)। **अरिहंते** = अरिहंतों की। **कित्तइस्सं** = स्तुति करूँगा। **चउवीसंपि** = सभी चौबीस तीर्थंकरों की। **केवली** = केवल ज्ञानी। **उसभं** = ऋषभ (देवजी)। **अजिअं** = अजित (नाथजी) को। **च** = और। **वंदे** = वन्दना करता हूँ। **संभव** = संभव (नाथजी)। **अभिणंदणं** = अभिनन्दन (जी) को। **सुमइं च** = और सुमति (नाथजी) को। **पउमप्पहं** = पद्मप्रभजी। **सुपासं** = सुपार्श्वनाथ जी । **जिणं** = जिनराज को। **च** = और। **चंदप्पहं** = चन्दप्रभ जी को। **वंदे** = वन्दना करता हूँ। **सुविहिं** = सुविधि (नाथजी) को। **च** = और। **पुप्फदंतं** = पुष्पदंतजी को। **सीअलसिज्जंस** = शीतलनाथजी, श्रेयांसनाथजी। **वासुपुज्जं च** = और वासुपूज्यजी को। **विमलमणंतं च जिणं** = विमलनाथजी तथा अनन्तनाथजी जिनेश्वर को। **धम्मं संतिं च वंदामि** = धर्मनाथ जी और शान्तिनाथजी को वन्दन करता हूँ। **कुंथुं अरं च** = कुन्थुनाथजी और अरनाथजी को। **मल्लिं वंदे** = मल्लिनाथजी को वन्दन करता हूँ। **मुणिसुव्वयं नमिजिणं च** = मुनिसुव्रतजी और नमिनाथ जी को। **वंदामि रिट्ठनेमिं** = अरिष्टनेमि जी को वन्दना करता हूँ। **पासं तह वद्धमाणं च** = और पार्श्वनाथजी तथा वर्द्धमानजी को। **एवं मए अभिथुआ** = इस प्रकार मेरे द्वारा स्तुति किये गये। **विहूय रयमला** = कर्मरूपी रज मेल से रहित। **पहीणजरमरणा** = बुढ़ापा और मृत्यु से रहित। **चउवीसंपि** = चौबीसों ही। **जिणवरा** = जिनेश्वर। **तित्थयरा** = तीर्थंकर। मे = मुझ पर। **पसीयंतु** = प्रसन्न होवें। **कित्तिय** = वचनयोग से

कीर्तित। **वंदिय** = काययोग से नमस्कृत। **महिया** = मनोयोग से वंदित। **जे ऐ लोगस्स उत्तमा सिद्धा** = जो लोक में उत्तम हैं, वे सिद्ध। **आरुग्ग** = आरोग्य। **बोहिलाभं** = बोधिलाभ। **समाहिवरमुत्तमं दिंतु** = उत्तम व श्रेष्ठ समाधि देवें। **चंदेसु निम्मलयरा** = चन्द्रों से अधिक निर्मल। **आइच्चेसु अहियं** = सूर्यों से अधिक। **पयासयरा** = प्रकाश करने वाले। **सागरवर गंभीरा** = महासमुद्र के समान गम्भीर। **सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु** = सिद्ध भगवान् मुझे सिद्धि (मोक्ष) प्रदान करें।

इस पाठ में भगवान् ऋषभदेव से लेकर (वर्द्धमान) महावीर तक चौबीस तीर्थंकरों की स्तुति की गई है। वे हमारे इष्टदेव हैं। अहिंसा और सत्य का मार्ग बताने वाले हैं। वे हमारे परम आराध्य देव हैं। उनका स्मरण करना, उत्कीर्त्तन (उत्कृष्ट गुणगान) करना और जप करना, हम सब का कर्त्तव्य है।

भगवान का ध्यान करने से, भगवान् के नाम का जप करने से और उनके द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर चलने से जीवन पवित्र एवं दिव्य बनता है। **नवमें तीर्थंकर श्री सुविधिनाथजी का दूसरा नाम श्री पुष्पदन्तजी भी है।**

7. सामायिक–प्रतिज्ञा सूत्र

करेमि भंते! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि, जावनियमं* पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं, न करेमि, न कारवेमि, मणसा वयसा कायसा, तस्स भंते! पडिक्कमामि, निंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि।

करेमि भंते! सामाइयं = हे भगवन् ! मैं सामायिक ग्रहण करता हूँ। **सावज्जं जोगं** = सावद्य योग (पाप क्रियाओं) का। **पच्चक्खामि** = त्याग करता हूँ। **जाव नियमं पज्जुवासामि** = जब तक नियम का सेवन करूँ तब तक। **दुविहं तिविहेणं** = दो करण, तीन योग से। **ण करेमि** = पाप कर्म करूँ नहीं। **ण कारवेमि** = कराऊँ नहीं। **मणसा वयसा कायसा** = मन वचन और काया से। **तस्स** = उसका (पहले के पाप कर्म का)। **भंते!** = हे भगवन्! **पडिक्कमामि** = प्रतिक्रमण करता हूँ। **निंदामि** = निन्दा करता हूँ। **गरिहामि** = गर्हा करता हूँ। **अप्पाणं** = अपनी आत्मा को। **वोसिरामि** = (कषाय आदि से) अलग करता हूँ।

इस पाठ के द्वारा साधक सामायिक करने की प्रतिज्ञा करता है। सामायिक एक प्रकार का आध्यात्मिक व्यायाम है। व्यायाम भले ही थोड़ी देर के लिए ही हो, परन्तु उसका प्रभाव और लाभ स्थायी होता है। इससे मन को एकाग्र बनाये रखने की प्रेरणा मिलती है, साधक का मनोबल बढता है और उसे मानसिक शान्ति प्राप्त होती है। सामायिक के काल में आत्मा मन, वचन, और काया के पाप कर्मों से भी बची रहती है। सामायिक परभाव से हटकर स्वभाव में रमण करने की कला है, समभाव की साधना करने की क्रिया है।

---

* जितनी सामायिक लेनी हो, 'उतने मूहूर्त उपरान्त नहीं पालूँ तब तक' ऐसा बोलें।

8. शक्रस्तव (णमोत्थु णं) सूत्र

णमोत्थु णं अरिहंताणं भगवंताणं आइगराणं, तित्थयराणं सयंसंबुद्धाणं, पुरिसुत्तमाणं, पुरिससीहाणं, पुरिसवरपुंडरीयाणं, पुरिसवरगंधहत्थीणं, लोगुत्तमाणं, लोगनाहाणं, लोगहियाणं, लोगपईवाणं, लोगपज्जोअगराणं, अभयदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं, सरणदयाणं, जीवदयाणं, बोहिदयाणं, धम्मदयाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मनायगाणं, धम्मसारहीणं, धम्मवर - चाउरंत - चक्कवट्टीणं, दीवोत्ताणं, सरणगई पइट्ठाणं अप्पडिहयवरनाण - दंसण-धराणं, विअट्टछउमाणं, जिणाणं जावयाणं, तिन्नाणं तारयाणं, बुद्धाणं बोहयाणं, मुत्ताणं मोयगाणं, सव्वण्णूणं, सव्वदरिसीणं, सिव - मयल - मरूअ - मणंत - मक्खय - मव्वाबाह - मपुणरावित्ति, सिद्धिगइ नामधेयं, ठाणं संपत्ताणं णमो जिणाणं जिअभयाणं।

णमोत्थु णं = नमस्कार हो। **अरिहंताणं भगवंताणं** = अरिहन्त भगवन्तों को। **आइगराणं** = धर्म की आदि करने वाले। **तित्थयराणं** = चतुर्विध तीर्थ (संघ) की स्थापना करने वाले। **सयंसंबुद्धाणं** = स्वयं बोध को प्राप्त। **पुरिसुत्तमाणं** = पुरुषों में उत्तम। **पुरिससीहाणं** = पुरुषों में सिंह के समान। **पुरिसवर** = पुरुषों में श्रेष्ठ। **पुण्डरीयाणं** = पुण्डरीक कमल के समान। **पुरिसवर** = पुरुषों में श्रेष्ठ। **गंधहत्थीणं** = गंधहस्ती के समान। **लोगुत्तमाणं** = सम्पूर्ण लोक में उत्तम। **लोगनाहाणं** = सम्पूर्ण लोक के नाथ। **लोगहिआणं** = सम्पूर्ण लोक के हित करने वाले। **लोगपईवाणं** = सम्पूर्ण लोक में दीपक के समान। **लोगपज्जोअगराणं** = लोक में ज्ञान का प्रकाश करने वाले। **अभयदयाणं** = अभय देने वाले। **चक्खुदयाणं** = ज्ञान रूपी चक्षु देने वाले। **मग्गदयाणं** = मोक्ष-मार्ग बताने वाले। **सरणदयाणं** = शरण देने वाले। **जीवदयाणं** = संयमी जीवन देने वाले। **बोहिदयाणं** = बोधि (सम्यक्त्व) देने वाले। **धम्मदयाणं** = चारित्र रूपी धर्म के दाता। **धम्मदेसयाणं** = धर्म के उपदेशक। **धम्मनायगाणं** = धर्म के नायक। **धम्मसारहीणं** = धमरूपी रथ के सारथी। **धम्मवर चाउरंत चक्कवट्टीणं** = चारों गति का अन्त करने वाले श्रेष्ठ धर्म चक्र का प्रवर्तन करने वाले। **दीवोत्ताणं** = द्वीप के समान रक्षक (आधारभूत)। **सरण गई पइट्ठाणं** = जीवों के लिए शरण, गति, आधार और प्रतिष्ठा देने वाले। **अप्पडिहय** = अप्रतिहत। **वर** = उत्तम। **नाण** = ज्ञान। **दंसण** = दर्शन के। **धराणं** = धारक। **विअट्टछउमाणं** = घाती कर्म से रहित। **जिणाणं** = स्वयं रागद्वेष को जीतने वाले। **जावयाणं** = दूसरों को जिताने वाले। **तिण्णाणं** = स्वयं भवसागर से तिरने वाले। **तारयाणं** = दूसरों को तिराने वाले। **बुद्धाणं** = स्वयं बोध पाये हुए। **बोहयाणं** = दूसरों को बोध देने वाले। **मुत्ताणं** = स्वयं कर्मों से मुक्त। **मोयगाणं** = दूसरों को मुक्त कराने वाले। **सव्वण्णूणं सव्वदरिसीणं** = सर्वज्ञ, सर्वदर्शी। **सिवमयलं** = कल्याणकारी एवं अचल। **अरुअं** = रोगरहित। **अणंतं** = अनन्त। **अक्खयं** = अक्षय। **अव्वाबाहं** = पीड़ारहित। **अपुणरावित्ति** = पुनरागमन रहित। **सिद्धिगई नाम धेयं** = सिद्धि गति नाम के। **ठाणं संपत्ताणं** = स्थान को संप्राप्त (सिद्ध) **ठाणं संपाविउकामाणं** = स्थान प्राप्त करने के लिये कामना करने वाले (अरिहंत)। **णमो जिणाणं** = नमस्कार हो जिनेश्वर भगवान को। **जिअभयाणं** = जिन्होंने भय को जीत लिया।

यह प्रणिपात सूत्र है क्योंकि इसमें जिनेश्वर भगवान की अत्यन्त विनम्र भावों से स्तुति की गई है। इस पाठ को शक्रस्तव भी कहते हैं। इस पाठ के प्रथम वाचन में सिद्धों की एवं दूसरे वाचन में अरिहंतों की स्तुति की जाती है। स्तुति साहित्य में यह महत्त्वपूर्ण पाठ माना जाता है।

दूसरी बार नमोत्थुणं का पाठ बालने पर 'ठाणं संपत्ताणं' के स्थान पर 'ठाणं' संपाविउकामाणं' बोलें। बाकी पाठ पहले के समान बोलें।

9. एयस्स नवमस्स का पाठ
(सामायिक समापन सूत्र)

एयस्स नवमस्स सामाइय-वयस्स, पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तं जहां-मणदुप्पणिहाणे, वयदुप्पणिहाणे कायदुप्पणिहाणे, सामाइयस्स सइ अकरणया, सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया, तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।।1।।

सामाइयं सम्मं काएणं न फासियं, न पालियं, न तीरियं, न किट्टियं, न सोहियं, न आराहियं, आणाए अणुपालियं न भवइ, तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।।2।।

सामायिक में दस मन के, दस वचन के, बारह काया के इन बत्तीस दोषों में से किसी भी दोष का सेवन किया हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।।3।।

सामायिक में स्त्री कथा✿, भक्त कथा, देश कथा, राज कथा इन चार विकथाओं में से कोई विकथा की हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।।4।।

सामायिक में आहार संज्ञा, भय संज्ञा, मैथुन संज्ञा, परिग्रह संज्ञा, इन चार संज्ञाओं में से किसी भी संज्ञा का सेवन किया हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।।5।।

सामायिक में अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार, अनाचार का जानते, अजानते, मन, वचन, काया से सेवन किया हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।।6।।

सामायिक व्रत विधि से ग्रहण किया, विधि से पूर्ण किया, विधि में कोई अविधि हो गई हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।।7।।

सामायिक में पाठ उच्चारण करते काना, मात्रा, अनुस्वार, पद, अक्षर, ह्रस्व, दीर्घ, कम, ज्यादा, आगे-पीछे, विपरीत पढ़ने-बोलने में आया हो तो अनन्त सिद्ध केवली भगवान की साक्षी से तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।।8।।

एयस्स नवमस्स = इस नवमें। **सामाइयवयस्स** = सामायिक व्रत के। **पंच अइयारा** = पाँच अतिचार हैं। **जाणियव्वा** = (वे) जानने योग्य हैं। **ण समायरियव्वा** = (किन्तु) आचरण करने योग्य नहीं। **तं जहा** = वे इस प्रकार हैं। **मणदुप्पणिहाणे** = मन में अशुभ विचार किये हों। **वयदुप्पणिहाणे** = अशुभ वचन बोले हों। **कायदुप्पणिहाणे** = शरीर से अशुभ कार्य किये हों। **सामाइयस्स सइ अकरणया** = सामायिक की स्मृति न रखी हो। **सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया** = विधि पूर्वक सामायिक का पालन नहीं किया हो। **तस्स** = वह। **दुक्कडं** = दोष। **मि** = मेरा। **मिच्छा** = मिथ्या हो।

सामाइयं सम्मं = सामायिक व्रत को सम्यक् प्रकार। **काएणं ण फासियं** = काया से न स्पर्शा हो। **ण पालियं** = न पाला हो। **ण तीरियं** = पूर्ण न किया हो। **ण किट्टियं** = कीर्त्तन न किया हो। **ण सोहियं** = शोधन न किया हो। **ण आराहियं** = आराधन न किया हो। **आणाए** = आज्ञानुसार। **अणुपालियं ण भवइ** = पालन नहीं किया हो। **तस्स मिच्छा मि दुक्कडं** = मेरा वह पाप मिथ्या हो।

यह समापन सूत्र है। साधक अपनी साधना में सावधानी रखता है, फिर भी उससे भूलों का होना

✿ बहिनें यहाँ 'पुरुष कथा' बोलें।

सहज संभव है। पर भूलों का सुधार कर लेना उसका कर्त्तव्य है।

प्रस्तुत पाठ में सामायिक व्रत के पाँच अतिचार बताए गए हैं, जिनका आचरण नहीं करना चाहिये।

साधक को सामायिक व्रत का सम्यक् रूप से ग्रहण, स्पर्शन और पालन करना चाहिये, तभी उसकी साधना सम्यक् साधना हो सकती है।

सामायिक ग्रहण करने की विधि

1. शान्त तथा एकान्त स्थान का उपाश्रय अथवा घर में चयन करें। 2. पूँजनी से उस स्थान का प्रमार्जन या प्रतिलेखन कर आसन बिछावें। 3. गृहस्थ वेश एवं वस्त्रों का परित्याग कर बिना सिले हुए वस्त्र धारण करें। 4. मुँह पर मुँहपत्ती धारण करें। 5. तत्पश्चात् गुरूजन या सतियाँ जी हों, तो उनकी ओर मुँह करके अथवा उनके न होने पर पूर्व अथवा उत्तर दिशा की ओर खड़े होकर सामायिक सूत्र के पाठों का निम्न क्रमानुसार उच्चारण करें-

(क) गुरुवन्दन सूत्र (तिक्खुत्तो) - तीन बार

(ख) नवकार महामंत्र - एक बार

(ग) ईर्यापथिक सूत्र (इच्छाकारेणं का पाठ) - एक बार

(घ) आत्म-शुद्धि सूत्र (तस्स उत्तरी का पाठ) - एक बार

(ड़) ईर्यापथिक सूत्र (इच्छाकारेणं) का 'काउस्सग्ग' करें।

{काउस्सग्ग की विधि इस प्रकार है- खड़े होकर दोनों पैरों के बीच में पीछे तीन अंगुल और आगे चार अंगुल जगह छोड़ कर दोनों हाथ सीधे लटका कर पैरों के अंगूठे के बीच में दृष्टि जमा कर वांछित पाठ का काउस्सग्ग (मन में चिन्तन) करें। यदि बैठे हुए काउस्सग्ग करना हो, तो पालथी लगाकर पालथी के मध्य भाग में बाएँ हाथ की हथेली में दाएँ हाथ की हथेली रखकर हथेली की सीध में दृष्टि जमाकर 'अप्पाणं वोसिरामि' शब्द बोलने के साथ काउस्सग्ग में स्थित हो वांछित पाठ का मौन काउस्सग्ग करे, काउस्सग्ग पूर्ण होने पर 'णमो अरिहंताणं' प्रकट में बोले।}

(च) कायोत्सर्ग शुद्धि का पाठ - एक बार

(छ) लोगस्स (तीर्थंकर स्तुति) एक बार उच्चारण करें।

(ज) सामायिक प्रतिज्ञा सूत्र (करेमि भंते का पाठ) - एक बार।

पाठ बोलते समय 'जावनियमं' के पश्चात् जितनी सामायिक लेनी हो, उतने मुहूर्त उपरांत न पालूँ तब तक, यह कहकर 'पज्जुवासामि' बोलते हुए पाठ पूरा करें।

(झ) णमोत्थु णं (शक्रस्तव) का पाठ - दो बार

यह पाठ पढ़ने से पहले बायाँ घुटना खड़ा कर इस घुटने पर अंजलिबद्ध दोनों हाथ रखें। फिर इस पाठ का उच्चारण करें।

दूसरी बार णमोत्थु णं का पाठ बोलने पर 'ठाणं संपत्ताणं' के स्थान पर 'ठाणं संपाविउकामाणं' का उच्चारण करें।

सामायिक ग्रहण करने के पश्चात् समापन काल (पारने तक) तक के कार्यक्रम

1. अध्ययन।
2. स्वाध्याय।
3. ध्यान।
4. जप, माला व आनुपूर्वी फेरना।
5. प्रवचन सुनना।
6. प्रार्थना, स्तवन आदि बोलना।
7. धार्मिक चर्चा या वार्ता करना।

सामायिक पारने की विधि

जितनी सामयिक का व्रत ग्रहण किया, उतना मुहूर्त (समय) पूर्ण होने पर निम्नानुसार सूत्रों का क्रमशः उच्चारण करें :-

1. नवकार-मंत्र - एक बार
2. ईर्यापथिक सूत्र (इच्छाकारेणं का पाठ) - एक बार
3. आत्मशुद्धि सूत्र (तस्सउत्तरी का पाठ) - एक बार
4. लोगस्स सूत्र (तीर्थंकर स्तुति का पाठ) - एक बार काउस्सग्ग करें।
5. 'णमो अरिहंताणं' प्रकट में बोलें।
6. कायोत्सर्ग - शुद्धि का पाठ - एक बार
7. लोगस्स (तीर्थंकर स्तुति) - एक बार
8. णमोत्थु णं (शक्रस्तव) - का पाठ - दो बार
9. एयस्स नवमस्स का पाठ (सामायिक समापन सूत्र) - एक बार
10. नवकार महामन्त्र - तीन बार

सामायिक के बत्तीस दोष

मन के दस दोष

1. अविवेक दोष = विवेक नहीं रखना।
2. यशोवांछा दोष = यशकीर्ति की इच्छा करना।
3. लाभ वांछा दोष = धनादि के लाभ की इच्छा करना।
4. गर्व दोष = गर्व करना।
5. भय दोष = भय करना।

6. निदान दोष = भविष्य के सुख की कामना करना।
7. संशय दोष = सामायिक के फल की प्राप्ति में सन्देह करना।
8. रोष दोष = क्रोध करना।
9. अविनय दोष = देव, गुरु, धर्म की अविनय आशातना करना।
10. अबहुमान दोष = भक्तिभावपूर्वक सामायिक न करना।

वचन के दस दोष

1. कुवचन दोष = बुरे वचन बोलना।
2. सहसाकार दोष = बिना विचारे बोलना।
3. स्वच्छन्द दोष = राग-रागनियों से सम्बन्धित गीत गाना।
4. संक्षेप दोष = पाठ और वाक्यों को छोटे करके बोलना।
5. कलह दोष = क्लेशकारी वचन बोलना।
6. विकथा दोष = स्त्रीकथा, भोजन कथा, देश कथा और राजकथा, इन चार विकथाओं में से कोई विकथा करना।
7. हास्य दोष = हँसी ठठ्ठा करना।
8. अशुद्ध दोष = पाठ को अशुद्ध बोलना।
9. निरपेक्ष दोष = बिना उपयोग बोलना।
10. मुम्मण दोष = अस्पष्ट-मुण मुण बोलना।

काया के बारह दोष

1. कुआसन दोष = अयोग्य-अभिमान आदि के आसन से बैठना।
2. चलासन दोष = आसन बार-बार बदलना।
3. चलदृष्टि दोष = इधर-उधर दृष्टि फेरना।
4. सावद्य-क्रिया दोष = सावद्य क्रिया-सीना, पिरोना आदि गृह कार्य करना।
5. आलम्बन दोष = भींतादि का सहारा लेना।
6. आकुंचन प्रसारण दोष = बिना कारण हाथ पैर फैलाना, समेटना।
7. आलस्य दोष = अंग मोड़ना।
8. मोटन दोष = हाथ पैर की अंगुलियों का कड़का निकालना।
9. मल दोष = मैल उतारना।
10. विमासन = गले या गाल पर हाथ लगाकर शोकासन से बैठना।
11. निद्रा = निद्रा लेना।
12. वैयावृत्त्य = बिना कारण दूसरों से वैयावृत्त्य-सेवा कराना।

सामायिक-प्रश्नोत्तरी

प्र.1. मंत्र किसे कहते हैं?

उत्तर- जिसमें कम शब्दों में अधिक भाव और विचार हों और जो कार्यसिद्धि में सहायक हो, जिसके मनन से जीव को रक्षण प्राप्त हो, उसे मंत्र कहते हैं।

प्र.2. नवकार मंत्र का क्या महत्त्व है?

उत्तर- नवकार मंत्र का अर्थ है- नमस्कार मंत्र। प्राकृत भाषा में नमस्कार को 'णमोक्कार' कहते हैं। इसमें पाँच पदों को नमन किया गया है। इनमें से दो देवपद (अरिहंत और सिद्ध) एवं शेष तीन गुरु पद (आचार्य, उपाध्याय एवं साधु) हैं। ये पाँचों पद अपने आराध्य या इष्ट होने के साथ हमेशा परम (श्रेष्ठ) भाव में स्थित रहते हैं, इसलिये इन्हें पंच परमेष्ठी भी कहा गया है। इस मंत्र के उच्चारण से पापों का नाश होता है। यह मंगलकारी है।

प्र.3. नवकार मंत्र मंगल रूप क्यों है?

उत्तर- **'मं'** का अर्थ है- पाप, और **'गल'** का अर्थ है- गलाना। जो पाप को गलावे, वह मंगल है। नवकार मंत्र से पाप का क्षय होता है, पाप रुकते हैं, इसलिए नवकार मंत्र मंगल रूप है।

प्र.4. नवकार मंत्र में कितने पद और अक्षर हैं?

उत्तर- नवकार मंत्र में 5 पद व 35 अक्षर हैं। चूलिका को मिलाने पर कुल 9 पद और 68 अक्षर होते हैं।

प्र.5. नवकार मंत्र में धर्मपद कौन सा है?

उत्तर- नवकार मंत्र में 'णमो' शब्द धर्म पद है, क्योंकि 'णमो' विनय का प्रतिपादक है। विनय ही धर्म का मूल हैं।

प्र.6. नवकार मंत्र किस भाषा में है?

उत्तर- नवकार मंत्र प्राकृत (अर्धमागधी प्राकृत) भाषा में है।

प्र.7. अरिहन्त किसे कहते हैं?

उत्तर- जिन्होंने चार घाति कर्मों-ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय का क्षय करके अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त चारित्र और अनन्त बल वीर्य नामक चार मूल गुणों को परिपूर्ण रूप से प्रकट कर लिया है, उन्हें अरिहन्त कहते हैं, इन्हें तीर्थंकर या जिन भी कहते हैं।

प्र.8. सिद्ध किसे कहते हैं?

उत्तर- जो आठों कर्मों का क्षय कर चुके हैं तथा जिन्होंने आत्मा के आठों गुणों को हमेशा के लिये सम्पूर्ण रूप से प्रकट कर लिया है, उन्हें सिद्ध कहते हैं।

प्र.9. अरिहन्त और सिद्ध में क्या अन्तर है?

उत्तर- अरिहन्त भगवान चार घाति कर्मों-ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय का क्षय कर चुके हैं। अरिहन्त सशरीरी होने से तीर्थ की स्थापना करते हैं, उपदेश देते हैं और धर्म से गिरते हुए साधकों को स्थिर करते हैं, जबकि सिद्ध आठ कर्मों (1. ज्ञानावरणीय, 2. दर्शनावरणीय, 3. मोहनीय, 4. अन्तराय, 5. वेदनीय, 6. आयु, 7. नाम, 8. गोत्र) को क्षय करके सिद्ध हो गये हैं और वे सुखरूप सिद्धालय में विराजमान हैं। वे अशरीरी होने से उपदेश आदि की प्रवृत्ति नहीं करते।

प्र.10 सिद्ध मुक्त हैं, फिर भी सिद्धों के पहले अरिहन्तों को नमस्कार क्यों किया गया?

उत्तर- अरिहंत धर्म को प्रकट कर मोक्ष की राह दिखाने वाले और सिद्धों की पहचान कराने वाले हैं। अरिहंत सशरीरी हैं और सिद्ध अशरीरी। परम उपकारी होने के कारण सिद्धों के पहले अरिहंतों को नमस्कार किया गया है।

प्र.11. आचार्य किसे कहते हैं?

उत्तर- चतुर्विध संघ के वे श्रमण, जो संघ के नायक होते हैं और जो स्वयं पंचाचार का पालन करते हुए साधु-संघ में भी आचार पालन कराते हैं, उन्हें आचार्य कहते हैं। ये 36 गुणों के धारक होते हैं।

प्र.12. उपाध्याय किसे कहते हैं?

उत्तर- वे श्रमण, जो स्वयं शास्त्रों का अध्ययन करते हैं और दूसरों को अध्ययन करवाते हैं, उन्हें उपाध्याय कहते हैं। ये 25 गुणों के धारक होते हैं।

प्र.13. साधु किसे कहते हैं?

उत्तर- गृहस्थ धर्म का त्याग कर जो पाँच महाव्रत- 1. अहिंसा, 2. सत्य, 3. अचौर्य, 4. ब्रह्मचर्य और 5. अपरिग्रह को पालते हैं एवं शास्त्रों में बतलाये गये समस्त आचार सम्बन्धी नियमों का पालन करते हैं, उन्हें साधु कहते हैं। ये 27 गुणों के धारक होते हैं।

प्र.14. तिक्खुत्तो के पाठ का क्या प्रयोजन है?

उत्तर- यह गुरुवन्दन सूत्र है। आध्यात्मिक साधना में गुरु का पद सबसे ऊँचा है। संसार के प्राणिमात्र के मन में रहे हुए अज्ञान अंधकार को दूर करके ज्ञानरूपी प्रकाश फैलाने वाले गुरू हैं। मुक्ति के मार्ग पर गुरु ही ले जाते हैं। ऐसे गुरूदेव की विनयपूर्वक वन्दना करना ही इस पाठ का प्रयोजन है।

प्र.15. तिक्खुत्तो के पाठ का दूसरा नाम क्या है?

उत्तर- तिक्खुत्तो के पाठ का दूसरा नाम गुरुवन्दन है।

प्र.16. तिक्खुत्तो के पाठ से तीन बार वन्दना क्यों करते हैं?

उत्तर - भगवती सूत्र 3/1 में उल्लेख है कि बलिचंचा राजधानी के अनेक असुरों, देवों तथा देवियों ने

तामली तापस की तिक्खुत्तो के पाठ से आवर्तन देते हुए तीन बार वन्दना की। भगवती सूत्र 12/1 में भी उल्लेख है कि श्रमणोपासक शंखजी व पुष्कलीजी ने, भगवान महावीर को तीन बार आदक्षिणा-प्रदक्षिणा पूर्वक वन्दना की।

इनसे स्पष्ट है कि तीन बार वन्दना करने की प्राचीन परम्परा रही है, जन-सामान्य में यही विधि प्रचलित रही है। इसके साथ ही हमारे गुरु भगवन्त सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन तथा सम्यक् चारित्र इन तीन रत्नों के धारक होते हैं। उन तीन रत्नों के प्रति आदर-बहुमान प्रकट करने तथा वे तीन रत्न हमारे जीवन में भी प्रकट हो, इसलिए भी तीन बार वन्दना की जाती है।

प्र.17. तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करते समय आवर्तन किस प्रकार दिये जाने चाहिए?

उत्तर- तिक्खुत्तो का पाठ बोलते तिक्खुत्तो शब्द के उच्चारण के साथ ही दोनों हाथ मस्तक (ललाट) के बीच में रखने चाहिए। आयाहिणं शब्द के उच्चारण के साथ अपने दोनों हाथ अपने मस्तक के बीच में से अपने स्वयं के दाहिने (Right) कान की ओर ले जाते हुए गले के पास से होकर बायें (Left) कान की ओर घुमाते हुए पुनः ललाट के बीच में लाना चाहिए। इस प्रकार एक आवर्तन पूरा करना चाहिए। इसी प्रकार से पयाहिणं और करेमि शब्द बोलते हुए भी एक-एक आवर्तन पूरा करना, इस प्रकार तिक्खुत्तो का एक बार पाठ बोलने में तीन आवर्तन देने चाहिए। तीनों बार तिक्खुत्तो के पाठ से इसी प्रकार तीन-तीन आवर्तन देने चाहिए।

प्र.18. आवर्तन देने की विधि को सरल तरीके से कैसे समझ सकते हैं?

उत्तर- आवर्तन देने की विधि को सरलता से इस प्रकार समझा जा सकता है कि जैसे हम उत्तर या पूर्व दिशा में मुँह करके खड़े हैं अथवा गुरुदेव के सम्मुख खड़े हैं, तब हमारे सामने घड़ी मानकर जिस प्रकार घड़ी में सूई घूमती है ठीक उसी प्रकार हमें भी आवर्तन देने चाहिए। जिस प्रकार मांगलिक कार्यों में आरती उतारी जाती हैं, मन्दिरों में परिक्रमा दी जाती हैं, उसी क्रम से आवर्तन देने चाहिए। अन्य भी लौकिक उदाहरणों से हम समझ सकते हैं कि जैसे घट्टी चलाने की क्रिया, चरखा घुमाने की क्रिया, रोटी बेलने का क्रम, वाहनों की गति दर्शाने वाले मीटर जिस क्रम से आगे बढ़ता है, ठीक इसी प्रकार आवर्तन हमें अपने ललाट के मध्य से प्रारंभ करते हुए अपने दाहिनी ओर (Right) ले जाते हुए देने चाहिए।

प्र.19. वन्दना करते समय किन-किन बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए?

उत्तर- वन्दना करते समय निम्न बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए-

1. वन्दना गुरुदेव के सामने खड़े होकर करना चाहिए। जहाँ तक हो सके उनके पीछे खड़े होकर वन्दना नहीं करना चाहिए।
2. यदि गुरुदेव सामने नहीं हो तो पूर्व दिशा(East), उत्तर दिशा (North) अथवा ईशान कोण (उत्तर पूर्व दिशा के बीच में) (Centre of East North) में मुख करके खड़े होकर वन्दना करना चाहिए।
3. आसन से नीचे उतरकर वन्दना करना चाहिए, आसनादि पर खड़े होकर वन्दना नहीं करना चाहिए।

4. गुरुदेव सामने हो अथवा नहीं हो आवर्तन देने का तरीका एक समान ही अर्थात् ललाट के मध्य में दोनों हाथ रखकर अपने स्वयं के बायें से दाहिनी ओर दोनों हाथों को घुमाते हुए आवर्तन देने चाहिए।
5. तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करते समय आवर्तन देने के पश्चात् 'वंदामि' शब्द नीचे बैठकर दोनों हाथ जोड़ते हुए बोलना चाहिए। 'नमंसामि' शब्द के उच्चारण करते पाँचों अंग (दोनों हाथ, दोनों घुटने और मस्तक) गुरुदेव के चरणों में झुकाना चाहिए। इसी प्रकार इस पाठ का अन्तिम शब्द 'मत्थएण वंदामि' बोलते समय भी पंचांग गुरुदेव के चरणों में झुकाना चाहिए।
6. अनुशासित रहकर, विवेकपूर्वक, विनम्रतापूर्वक वन्दन करने का पूरा ध्यान रखना चाहिए।
7. गुरुदेव को स्वाध्याय में, वाचना में, कायोत्सर्ग में, साधनादि संयम चर्या में व्यवधान नहीं हो इस बात का ध्यान रखते हुए वन्दना करनी चाहिए।
8. जब गुरु भगवन्त गौचरी कर रहे हों, तपस्या, वृद्धावस्था, बीमारी अथवा अन्य किसी भी कारण से सोये हुए हों, आवश्यक क्रिया कर रहे हों, गोचरी लेने जा रहे हों, तब भी गुरुदेव के निकट जाकर वन्दना करना विवेकपूर्ण नहीं माना जाता है।
9. श्रावक-श्राविकाओं के ज्ञान-ध्यान में, प्रवचन-श्रवण आदि में बाधा नहीं हो, इसका पूरा विवेक रखते हुए वन्दना करनी चाहिए।

प्र.20 आवर्तन तीन बार क्यों किये जाते हैं?

उत्तर- मन, वचन और काया से वन्दनीय की पर्युपासना करने के लिये तीन बार आवर्तन किये जाते हैं।

प्र.21. तिक्खुत्तो के पाठ में 'वंदामि' और 'णमंसामि' शब्दों का साथ-साथ प्रयोग क्यों किया है?

उत्तर- तिक्खुत्तो के पाठ में 'वंदामि' का अर्थ है वन्दना करता हूँ और 'णमंसामि' का अर्थ है- नमस्कार करता हूँ। वन्दना में वचन द्वारा गुरुदेव का गुणगान किया जाता है, किन्तु नमस्कार में पाँचों अंगों को नमाकर काया द्वारा नमन किया जाता है।

प्र.22 तिक्खुत्तो के पाठ में आए हुए सक्कारेमि और सम्माणेमि का क्या अर्थ है?

उत्तर- सक्कारेमि का अर्थ है- गुणवान पुरुषों को वस्त्र, पात्र, आहार, आसन आदि देकर उनका सत्कार करना। सम्माणेमि का अर्थ है- गुणवान पुरुषों को मन और आत्मा से बहुमान प्रदान करना।

प्र.23 पर्युपासना कितने प्रकार की होती है?

उत्तर- पर्युपासना तीन प्रकार की होती है- 1. नम्र आसन से सुनने की इच्छा सहित वन्दनीय के सम्मुख हाथ जोड़कर बैठना, कायिक पर्युपासना है। 2. उनके उपदेश के वचनों का वाणी द्वारा सत्कार करते हुए समर्थन करना, वाचिक पर्युपासना है। 3. उपदेश के प्रति अनुराग रखते हुए एकाग्रचित्त रखना, मानसिक पर्युपासना हैं।

प्र.24 पर्युपासना से क्या-क्या लाभ हैं?

उत्तर- सम्यग्चारित्र पालने वाले श्रमण-निर्ग्रन्थों की पर्युपासना करने से अशुभ कर्मों की निर्जरा होती है और महान् पुण्य का उपार्जन होता है।

प्र.25. वन्दन करने से किस गुण की प्राप्ति होती हैं?

उत्तर- वन्दन करने से जीव नीच गोत्रकर्म का क्षय करता है और उच्च गोत्रकर्म का बन्ध करता है, फिर वह स्थिर सौभाग्यशाली होता है, उसकी आज्ञा सफल होती है तथा वह दाक्षिण्यभाव अर्थात् लोकप्रियता को प्राप्त कर लेता है।

प्र.26. 'इरियावहिया' के पाठ का क्या प्रयोजन है?

उत्तर- 'आलोचना सूत्र' या इरियावहिया' के पाठ से गमनागमन के दोषों की शुद्धि की जाती है। गमनागमन करते हुए प्रमादवश यदि किसी जीव को पीड़ा पहुँची हो, तो इसके द्वारा खेद प्रकट किया जाता है।

प्र.27. 'इरियावहिया' के पाठ में कितने प्रकार के जीवों की विराधना का उल्लेख है?

उत्तर- इरियावहिया के पाठ में पाँच प्रकार के जीवों (एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय) की विराधना का उल्लेख है।

प्र.28 'इरियावहिया' के पाठ में विराधना (जीव-हिंसा) के कितने प्रकार बतलाये हैं और कौन-कौन से हैं?

उत्तर- 'इरियावहिया' के पाठ में विराधना दस प्रकार की बतलायी हैं, यथा- 1. अभिहया, 2. वत्तिया, 3. लेसिया, 4. संघाइया, 5. संघट्टिया, 6. परियाविया, 7. किलामिया, 8. उद्दविया, 9. ठाणाओ ठाणं संकामिया और 10. जीवियाओ ववरोविया।

प्र.29 'तस्सउत्तरी' पाठ का दूसरा नाम क्या हैं?

उत्तर- 'तस्सउत्तरी' पाठ को 'उत्तरीकरण सूत्र' एवं आत्म-शुद्धि का पाठ भी कहते हैं।

प्र.30 तस्सउत्तरी के पाठ का क्या प्रयोजन है?

उत्तर- तस्सउत्तरी के पाठ से साधक कायोत्सर्ग करने की प्रतिज्ञा करता है, जिससे वह आत्मा को शरीर की आसक्ति से पृथक् कर (आत्मा को) कषायों से मुक्त कर सके।

प्र.31. कायोत्सर्ग की क्या काल मर्यादा है?

उत्तर- कायोत्सर्ग की कोई निश्चित् काल मर्यादा नहीं है। इसकी पूर्ति 'णमो अरिहंताणं' शब्द बोलकर की जाती है। कायोत्सर्ग काया को स्थिर करके, मौन धारण करके और मन को एकाग्र करके किया जाता है।

प्र.32. कायोत्सर्ग के कितने आगार हैं?

उत्तर- कायोत्सर्ग के 1. ऊससिएणं, 2. नीससिएणं, 3. खासिएणं, 4.छीएणं, 5. जंभाइएणं, 6. उड्डुएणं, 7. वायनिसग्गेणं, 8. भमलीए, 9. पित्त मुच्छाए, 10. सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, 11. सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं और 12. सुहुमेहिं दिट्ठि संचालेहिं, ये 12 आगार हैं।

प्र.33. 'तस्सउत्तरी' पाठ में 'अभग्गो-अविराहिओ' का क्या अर्थ है?

उत्तर- तस्स उत्तरी पाठ में 'अभग्गो' का अर्थ है- काउस्सग्ग खण्डित नहीं होना और अविराहिओ का अर्थ है- काउस्सग्ग भंग नहीं होना। काउस्सग्ग में सर्व विराधना न होना 'अभग्गो' तथा आंशिक विराधना न होना 'अविराहिओ' कहलाता है।

प्र.34. 'लोगस्स' पाठ का क्या प्रयोजन है?

उत्तर- 'लोगस्स' पाठ में भगवान ऋषभदेव से लेकर भगवान महावीर तक चौबीस तीर्थंकरों की स्तुति की गई है। ये हमारे इष्टदेव हैं। इन्होंने अहिंसा और सत्य का मार्ग बताया है। इनकी भाव पूर्वक स्तुति करने से जीवन पवित्र और दिव्य बनता है।

प्र.35. 'लोगस्स' पाठ का दूसरा नाम क्या है?

उत्तर- 'लोगस्स' पाठ का दूसरा नाम 'उत्कीर्त्तन सूत्र' और 'चतुर्विंशतिस्तव' है।

प्र.36. 'करेमि भंते' पाठ का क्या प्रयोजन है?

उत्तर- 'करेमि भंते' पाठ से सभी पापों का त्याग कर सामायिक व्रत लेने की प्रतिज्ञा की जाती है। इसे सामायिक-प्रतिज्ञा सूत्र भी कहते हैं।

प्र.37. सामायिक से क्या लाभ है?

उत्तर- सामायिक द्वारा पापों के आस्रव को रोककर संवर की आराधना होती है और सामायिक काल में स्वाध्याय करने से कर्मों की निर्जरा होती है। इसके फल के बारे में कहा गया है कि प्रतिदिन लाख स्वर्ण मुद्राओं का दान करने वाला व्यक्ति एक शुद्ध सामायिक करने वाले की समानता नहीं कर सकता।

प्र.38. सामायिक व्रत कितने काल, कितने करण और कितने योग से किया जाता है?

उत्तर- सामायिक व्रत एक मुहूर्त यानी 48 मिनट के लिए, 2 करण (पाप स्वयं नहीं करना और दूसरों से नहीं कराना) और 3 योग (मन, वचन और काया) से किया जाता है।

प्र.39. 'णमोत्थु णं' पाठ का क्या प्रयोजन है?

उत्तर- इस पाठ के द्वारा सिद्ध और अरिहंत देवों की भाव पूर्वक अनेक गुणों का वर्णन करते हुए उनकी स्तुति करना तथा उनके गुण हमारी आत्मा में भी प्रकट करना, मुख्य प्रयोजन है।

प्र.40. 'णमोत्थु णं' पाठ का दूसरा नाम क्या है?

उत्तर- इस पाठ को 'शक्रस्तव' पाठ भी कहते हैं, क्योंकि प्रथम देवलोक के इन्द्र-शक्रेन्द्र भी तीर्थंकरों - अरिहन्तों की इसी पाठ से स्तुति करते हैं। इसका एक और नाम प्रणिपात सूत्र भी है। प्रणिपात का अर्थ - अत्यन्त विनम्रता एवं बहुमानपूर्वक अरिहन्त-सिद्ध की स्तुति करना है।

प्र.41. पहला 'णमोत्थु णं' किसको दिया जाता है?

उत्तर- पहला 'णमोत्थु णं' सिद्ध भगवन्तों को दिया जाता है।

प्र.42. दूसरा 'णमोत्थु णं' किसको दिया जाता है?

उत्तर- दूसरा 'णमोत्थु णं' अरिहंतों को दिया जाता है।

प्र.43. नवकार मन्त्र में पहले अरिहंतों को नमस्कार किया गया पर 'णमोत्थु णं' में पहले सिद्धों को नमस्कार क्यों किया गया?

उत्तर- नमस्कार में उपकार की प्रधानता होती है, जबकि स्तुति में गुणों की प्रधानता होती है। नवकार मन्त्र में जीवों पर उपकार की दृष्टि से पहले अरिहंतों को नमस्कार किया गया, किन्तु 'णमोत्थु णं' में शक्रेन्द्र महाराज ने आत्मिक गुणों में बड़े की दृष्टि से पहले सिद्धों को नमस्कार किया है।

प्र.44. सामायिक के उपकरण कौन-कौन से हैं?

उत्तर- 1. बैठने हेतु सूती या ऊनी आसन। 2. पहनने और ओढ़ने के लिए बिना सिले हुए दो सूती वस्त्र। 3. मुँहपत्ती। 4. पूँजनी। 5. स्वाध्याय हेतु धार्मिक पुस्तकें आदि। महिलाओं के लिए सादे वस्त्र व अन्य उपकरण ऊपर लिखे अनुसार।

तत्त्व विभाग-

पचीस बोल 14 से 25 तक

चौदहवें बोले छोटी नव तत्त्व के 115 भेद -

नव तत्त्व के नाम- 1. जीव तत्त्व, 2. अजीव तत्त्व, 3. पुण्य तत्त्व, 4. पाप तत्त्व, 5. आस्रव तत्त्व, 6. संवर तत्त्व, 7. निर्जरा तत्त्व, 8. बन्ध तत्त्व और 9. मोक्ष तत्त्व।

इनके भेद- जीव के 14, अजीव के 14, पुण्य के 9, पाप के 18, आस्रव के 20, संवर के 20, निर्जरा के 12, बन्ध के 4 और मोक्ष के 4 भेद। ये कुल 115 हुए।

1. जीव तत्त्व के 14 भेद

1. सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त, 2. सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त, 3. बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त, 4. बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त, 5. बेइन्द्रिय अपर्याप्त, 6. बेइन्द्रिय पर्याप्त, 7. तेइन्द्रिय अपर्याप्त, 8. तेइन्द्रिय पर्याप्त, 9. चउरिन्द्रिय अपर्याप्त, 10. चउरिन्द्रिय पर्याप्त, 11. असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, 12. असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त, 13. संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, 14. संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त।

2. अजीव तत्त्व के 14 भेद

1. धर्मास्तिकाय के तीन भेद- 1. स्कन्ध, 2. देश और 3. प्रदेश।
2. अधर्मास्तिकाय के तीन भेद- 1. स्कन्ध, 2. देश और 3. प्रदेश।
3. आकाशास्तिकाय के तीन भेद- 1. स्कन्ध, 2. देश, और 3. प्रदेश।

ये नौ और दसवाँ काल। ये दस भेद 'अरूपी अजीव' के हैं। रूपी पुद्गल के चार भेद -

1. स्कन्ध, 2. देश, 3. प्रदेश और 4 परमाणु पुद्गल।

3. पुण्य तत्त्व के 9 भेद

1. अन्न पुण्य- भोजन के लिए अन्न देना।
2. पान पुण्य- पीने के लिए पानी देना।
3. लयन पुण्य- जगह, स्थान देना।
4. शयन पुण्य- शय्या, पाट, पाटला, बाजोट आदि देना।
5. वस्त्र पुण्य- वस्त्र देना।
6. मन पुण्य- मन में शुभ भाव रखना, दान-शील-तपरूप मन रखना।
7. वचन पुण्य- मुख से शुभ वचन बोलना।
8. काय पुण्य- काय द्वारा दया पालन, सेवा, विनय आदि करना।
9. नमस्कार पुण्य- गुणवान् पुरुषों को नमस्कार करना।,

4. पाप तत्त्व के 18 भेद

1. प्राणातिपात- जीवों की हिंसा करना।
2. मृषावाद- असत्य-झूठ बोलना।
3. अदत्तादान- बिना दी हुई वस्तु लेना (चोरी करना)।
4. मैथुन- कुशील सेवन करना।
5. परिग्रह- धन-सम्पत्ति आदि रखना, उन पर ममता रखना।
6. क्रोध- खुद तपना, दूसरों को तपाना, गुस्सा करना।
7. मान- अहंकार (घमंड) करना।
8. माया- कपटाई-ठगाई करना।
9. लोभ- तृष्णा बढ़ना, मूर्च्छा (गृद्धिपना) रखना।
10. राग- प्रिय वस्तु आदि मान कर उस पर स्नेह रखना।
11. द्वेष- अप्रिय वस्तु आदि मान कर उस पर द्वेष करना।
12. कलह- क्लेश करना।
13. अभ्याख्यान- झूठा कलंक लगाना।
14. पैशुन्य- दूसरे की चुगली करना।
15. परपरिवाद- दूसरे का अवर्णवाद (निन्दा) बोलना।
16. रति-अरति- पाँच इन्द्रियों के तेईस विषयों में से मनोज्ञ वस्तु पर प्रसन्न होना और अमनोज्ञ वस्तु पर नाराज होना।
17. मायामृषावाद- कपट सहित झूठ बोलना।
18. मिथ्यादर्शन शल्य- कुदेव, कुगुरु और कुधर्म पर श्रद्धा रखना।

5. आश्रव तत्त्व के 20 भेद

1. मिथ्यात्व- दस प्रकार के मिथ्यात्व का सेवन करे तो आस्रव।
2. अव्रत- व्रत-पच्चक्खाण नहीं करे तो आस्रव।
3. प्रमाद- पाँच प्रकार का प्रमाद सेवे तो आस्रव।
4. कषाय- पच्चीस कषाय सेवे तो आस्रव।
5. अशुभ योग- अशुभ योग प्रवर्तावे तो आस्रव।
6. प्राणातिपात- जीव की हिंसा करे तो आस्रव।
7. मृषावाद- झूठ बोले तो आस्रव।
8. अदत्तादान- चोरी करे तो आस्रव।

9. मैथुन- कुशील सेवे तो आस्रव।
10. परिग्रह- धन-धान्य आदि रखे, उन पर ममता भाव रखे तो आस्रव।
11. श्रोत्रेन्द्रिय को वश में नहीं रखे तो आस्रव।
12. चक्षुरिन्द्रिय को वश में नहीं रखे तो आस्रव।
13. घ्राणेन्द्रिय को वश में नहीं रखे तो आस्रव।
14. रसनेन्द्रिय को वश में नहीं रखे तो आस्रव।
15. स्पर्शनेन्द्रिय को वश में नहीं रखे तो आस्रव।
16. मन को वश में नहीं रखे तो आस्रव।
17. वचन को वश में नहीं रखे तो आस्रव।
18. काय को वश में नहीं रखे तो आस्रव।
19. भंड-उपकरण अयतना से लेवे और अयतना से रखे तो आस्रव।
20. सूई-कुशाग्र मात्र अयतना से लेवे और अयतना से रखे तो आस्रव।

6. संवर तत्त्व के 20 भेद

1. समकित-सही श्रद्धान करे तो संवर।
2. व्रत- पच्चक्खाण करे तो संवर।
3. प्रमाद नही करे तो संवर।
4. कषाय नहीं करे तो संवर।
5. शुभयोग प्रवर्तावे तो संवर।
6. अप्राणातिपात- जीव की हिंसा का त्याग करे तो संवर।
7. अमृषावाद- झूठ बोलने का त्याग करे तो संवर।
8. अअदत्तादान- चोरी का त्याग करे तो संवर।
9. अमैथुन- कुशील का त्याग करे तो संवर।
10. अपरिग्रह- ममत्व का त्याग करे तो संवर।
11. श्रोत्रेन्द्रिय को वश में करे तो संवर।
12. चक्षुरिन्द्रिय को वश में करे तो संवर।
13. घ्राणेन्द्रिय को वश में करे तो संवर।
14. रसनेन्द्रिय को वश में करे तो संवर।
15. स्पर्शनेन्द्रिय को वश में करे तो संवर।
16. मन को वश में करे तो संवर।
17. वचन को वश में करे तो संवर।

18. काय को वश में करे तो संवर।

19. भंड उपकरण यतना से लेवे और यतना से रखे तो संवर।

20. सूई कुशाग्र मात्र यतना से लेवे और यतना से रखे तो संवर।

7. निर्जरा तत्त्व के 12 भेद

1. अनशन, 2. ऊनोदरी, 3. भिक्षाचर्या, 4. रसपरित्याग, 5. कायक्लेश, 6. प्रतिसंलीनता, 7. प्रायश्चित्त, 8. विनय, 9. वैयावृत्त्य, 10. स्वाध्याय, 11. ध्यान और 12. व्युत्सर्ग (कायोत्सर्ग)।

8. बन्ध तत्त्व के 4 भेद

1. प्रकृति बन्ध 2. स्थिति बन्ध, 3. अनुभाग बन्ध और 4. प्रदेश बन्ध।

9. मोक्ष तत्त्व के 4 भेद

1. सम्यक् ज्ञान, 2. सम्यक् दर्शन, 3. सम्यक् चारित्र और 4. सम्यक् तप।

(15) **पन्द्रहवें बोले आत्मा आठ–**

1. द्रव्य आत्मा, 2. कषाय आत्मा, 3. योग आत्मा, 4. उपयोग आत्मा, 5. ज्ञान आत्मा, 6. दर्शन आत्मा, 7. चारित्र आत्मा और 8. वीर्य आत्मा

(16) **सोलहवें बोले दण्डक चौबीस–**

1. सात नारकी का एक दण्डक। सात नारकी के नाम– घम्मा, वंसा, सीला, अंजणा, रिट्ठा, मघा और माघवई। इनके गोत्र– रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमः प्रभा और तमतमा प्रभा।

2–11. दस भवनपतियों के दस दण्डक। उनके नाम– 1. असुरकुमार, 2. नागकुमार, 3. सुवर्णकुमार, 4. विद्युत्कुमार, 5. अग्निकुमार 6. द्वीपकुमार 7. उदधिकुमार, 8. दिशाकुमार 9. पवनकुमार और 10. स्तनितकुमार।

12–16. पाँच स्थावरों (पृथ्वी, अप्, तेउ, वायु और वनस्पतिकाय) के पाँच दण्डक।

17–19. तीन विकलेन्द्रियों (बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, और चउरिन्द्रिय) के तीन दण्डक।

20. तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय का एक दण्डक।

21. मनुष्य का एक दण्डक।

22. वाणव्यन्तर देवों का एक दण्डक।

23. ज्योतिषी देवों का एक दण्डक।

24. वैमानिक देवों का एक दण्डक।

(17) **सतरहवें बोले लेश्या छः–**

1. कृष्ण लेश्या, 2. नील लेश्या, 3. कापोत लेश्या, 4. तेजो लेश्या, 5. पद्म लेश्या और 6.

शुक्ल लेश्या।

(18) **अठारहवें बोले दृष्टि तीन–**

1. सम्यग् दृष्टि, 2. मिथ्या दृष्टि और 3. सम्यग्मिथ्या दृष्टि (मिश्रदृष्टि)।

(19) **उन्नीसवें बोले ध्यान चार–**

1. आर्त्तध्यान, 2. रौद्रध्यान, 3. धर्मध्यान, 4. शुक्लध्यान।

(20) **बीसवें बोले षट्द्रव्यों के 30 भेद–**

छः द्रव्यों के नाम– 1. धर्मास्तिकाय, 2. अधर्मास्तिकाय, 3. आकाशास्तिकाय, 4. कालद्रव्य, 5. जीवास्तिकाय और 6. पुद्गलास्तिकाय

धर्मास्तिकाय को पाँच बोलों से पहचानें

1. द्रव्य से - एक द्रव्य. 2. क्षेत्र से - सम्पूर्ण लोक प्रमाण, 3. काल से - आदि अन्त रहित, 4. भाव से - वर्ण नहीं, गंध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी, अजीव, शाश्वत्, लोकव्यापी और असंख्यात प्रदेशी है। 5. गुण से - चलन गुण, पानी में मछली का दृष्टान्त। जैसे पानी के निमित्त (सहायता) से मछली चलती है, इसी तरह जीव और पुद्गल दोनों धर्मास्तिकाय के निमित्त से चलते हैं।

अधर्मास्तिकाय को पाँच बोलों से पहचानें

1. द्रव्य से- एक द्रव्य. 2. क्षेत्र से- सम्पूर्ण लोक प्रमाण, 3. काल से- आदि अन्त रहित, 4. भाव से- वर्ण नहीं, गंध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी, अजीव, शाश्वत्, लोकव्यापी और असंख्यात प्रदेशी है। 5. गुण से- स्थिर गुण - थके हुए यात्री को छाया का दृष्टान्त। जैसे थका हुआ पथिक-यात्री वृक्ष की छाया में बैठ कर विश्राम कर लेता है, उसी प्रकार जीव और पुद्गल के ठहरने में अधर्मास्तिकाय निमित्त है।

आकाशास्तिकाय को पाँच बोलों से पहचानें

1. द्रव्य से- एक द्रव्य, 2. क्षेत्र से- लोकालोक प्रमाण, 3. काल से- आदि अन्त रहित, 4. भाव से- वर्ण नहीं, गंध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी, अजीव, शाश्वत्, लोकालोकव्यापी और अनन्त प्रदेशी है। लोक में असंख्यात प्रदेशी है। 5. गुण से- अवकाश-पोलार गुण, जगह देने का गुण। आकाश में विकास, भींत में खूँटी और दूध में पतासा का दृष्टान्त।

काल द्रव्य को पाँच बोलों से पहचाने

1. द्रव्य से- एक काल अनन्त द्रव्यों पर प्रवर्ते, 2. क्षेत्र से- अढ़ाई द्वीप प्रमाण, 3. काल से- आदि अन्त रहित, 4. भाव से- वर्ण नहीं, गंध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी, अजीव, शाश्वत्, अढ़ाई द्वीप प्रमाण और अप्रदेशी है। 5. गुण से- वर्तन गुण। नये को पुराना करे, पुराने को नष्ट करे। कपड़े और कैंची का दृष्टान्त।

जीवास्तिकाय को पाँच बोलों से पहचानें

1. द्रव्य से- अनन्त जीव द्रव्य, 2. क्षेत्र से- सम्पूर्ण लोक प्रमाण, 3. काल से- आदि अन्त रहित, 4. भाव से- वर्ण नहीं, गंध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी, जीव, शाश्वत्, लोकव्यापी और अनन्त प्रदेशी है। एक जीव की अपेक्षा असंख्यात प्रदेशी है। 5. गुण से- उपयोग गुण। चन्द्रमा की कला का दृष्टान्त।

पुद्गलास्तिकाय को पाँच बोलों से पहचानें

1. द्रव्य से- अनन्त द्रव्य, 2. क्षेत्र से- सम्पूर्ण लोक प्रमाण, 3. काल से- आदि अन्त रहित, 4. भाव से- वर्ण है, गंध है, रस है, स्पर्श है, रूपी, अजीव, शाश्वत्, संख्यात, असंख्यात और अनन्त प्रदेशी है। 5. गुण से- पूरण, गलन, सड़न, विध्वंसन गुण। बादल का दृष्टान्त- बादल की तरह मिलते और बिखरते हैं।

(21) **इक्कीसवें बोले राशि दो-**

1. जीव राशि और 2. अजीव राशि। जीव राशि के 563 और अजीव राशि के 560 भेद होते हैं।

संसारी जीवों के 563 भेद इस प्रकार हैं- नारकी के 14, तिर्यंच के 48, मनुष्य के 303 और देव के 198 भेद।

नारकी के 14 भेद- घम्मा, वंसा, सीला, अंजणा, रिट्ठा, मघा और माघवई, इन सात नारकी के अपर्याप्त और पर्याप्त।

तिर्यंच के 48 भेद

पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, और वायुकाय, इन चार प्रकार के स्थावर जीवों के प्रत्येक के सूक्ष्म और बादर तथा अपर्याप्त और पर्याप्त - ऐसे चार भेदों से कुल 16 भेद हुए। वनस्पतिकाय के सूक्ष्म, साधारण और प्रत्येक, इन तीन के अपर्याप्त और पर्याप्त, ये 6 भेद हुए। इस प्रकार एकेन्द्रिय के कुल 22 भेद हुए।

बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौरेन्द्रिय, इन तीन विकलेन्द्रिय के अपर्याप्त और पर्याप्त ऐसे 6 भेद हुए।

तिर्यंच पंचेन्द्रिय के पाँच प्रकार - 1. जलचर 2. स्थलचर 3. खेचर 4. उरपरिसर्प और 5. भुजपरिसर्प। ये पाँचों ही असंज्ञी और पाँचों ही संज्ञी। ये 10 भेद हुए और इनके अपर्याप्त और पर्याप्त, ऐसे 20 भेद हुए। इस प्रकार 22+6+20 = 48 भेद तिर्यंच के हुए।

मनुष्य के 303 भेद

कर्मभूमिज मनुष्य के 15 भेद हैं। यथा 5 भरत* 5 ऐरवत और 5 महाविदेह में उत्पन्न मनुष्यों के 15 भेद। अकर्मभूमिज (भोगभूमिज) मनुष्य के 30 भेद हैं। यथा - 5 देवकुरू, 5 उत्तरकुरू, 5 हरिवास, 5 रम्यक्वास, 5 हैमवत और 5 ऐरण्यवत, इन 30 क्षेत्रों में उत्पन्न होने वाले मनुष्यों के 30 भेद। 56 अन्तरद्वीपों में उत्पन्न होने वाले मनुष्यों के 56 भेद। ये सब मिला कर गर्भज मनुष्य के 101 (15+30+56) भेद होते हैं। इनके अपर्याप्त और पर्याप्त के भेद से 202 भेद होते हैं और इन 101 गर्भज मनुष्यों की अशुचि में उत्पन्न सम्मूर्च्छिम मनुष्य के 101 भेद अपर्याप्त**। कुल मिला कर मनुष्य के 303 भेद होते हैं।

देव के 198 भेद

भवनपति के 10 भेद- 1. असुरकुमार 2. नागकुमार 3. सुवर्णकुमार 4. विद्युत्कुमार 5. अग्निकुमार 6. द्वीपकुमार 7. उदधिकुमार 8. दिशाकुमार 9. पवनकुमार और 10. स्तनितकुमार। परम अधार्मिक देवों के 15 भेद हैं। यथा- 1. अम्ब 2. अम्बरीष 3. श्याम 4. शबल 5. रौद्र 6. महारौद्र 7. काल 8. महाकाल 9. असिपत्र 10. धनुष 11. कुम्भ 12. बालुका 13. वैतरणी 14. खरस्वर और 15. महाघोष।

वाणव्यन्तर के 16 भेद हैं। जैसे- पिशाचादि 8 (1 पिशाच 2 भूत 3 यक्ष 4 राक्षस 5 किन्नर 6 किम्पुरूष 7 महोरग 8 गन्धर्व) आणपण्णे आदि 8 (1 आणपन्ने 2 पाणपन्ने 3 इसिवाई 4 भूयवाई 5 कन्दे 6 महाकन्दे 7 कूह्मण्डे 8 पयंगदेवे)

जृम्भक के 10 भेद- (1 अन्न जृम्भक 2 पान जृम्भक 3 लयन जृम्भक 4 शयन जृम्भक 5 वस्त्र जृम्भक 6 फल जृम्भक 7 पुष्प जृम्भक 8 फलपुष्प जृम्भक 9 विद्या जृम्भक और 10 अव्यक्त जृम्भक)।

ज्योतिषी देवों के 10 भेद- 1 चन्द्र, 2 सूर्य 3 ग्रह 4 नक्षत्र और 5 तारा। इनके चर (भ्रमणशील) और अचर (स्थिर) के भेद से दस भेद हो जाते हैं।

नोटः- **भवनपति से लेकर ज्योतिषी तक के सभी देवता भी कल्पोपपन्न कहलाते हैं।**

वैमानिक देवों के कल्पोपपन्न और कल्पातीत दो भेद हैं। इनमें **कल्पोपपन्न** के भेद इस प्रकार हैं- 12 देवलोक- 1 सौधर्म 2 ईशान 3 सनत्कुमार 4 माहेन्द्र 5 बह्म 6 लांतक 7 महाशुक्र 8 सहस्रार 9 आणत 10 प्राणत 11 आरण और 12 अच्युत।

किल्विषिक देव के तीन भेद- 1. तीन पल्योपम की स्थिति वाले 2. तीन सागरोपम की स्थिति वाले 3. तेरह सागरोपम की स्थिति वाले।

लोकान्तिक देवों के नौ भेद- 1 सारस्वत 2 आदित्य, 3 वह्नि 4 वरूण 5 गर्दतोयक 6 तुषित 7 अव्याबाध 8 आग्नेय और 9 अरिष्ट।

---

* पाँच भरत इस प्रकार हैं- जम्बूद्वीप में 1, धातकी खंड में 2 और अर्ध पुष्कर में 2, ये 5 भरत हुए। इसी प्रकार ऐरवत, महाविदेह और अकर्मभूमि में भी समझने चाहिए।

** सम्मूर्च्छिम मनुष्य अपर्याप्त अवस्था में काल कर जाते हैं, पर्याप्त बन ही नहीं पाते, इस कारण इनके पर्याप्त के भेद नहीं लिये हैं।

कल्पातीत के दो भेद- ग्रैवेयक और अनुत्तर वैमानिक। ग्रैवेयक के 9 भेद - 1 भद्र 3 सुभद्र 3 सुजात 4 सुमनस 5 सुदर्शन 6 प्रियदर्शन 7 आमोह 8 सुप्रतिबद्ध और 9 यशोधर।

अनुत्तर वैमानिक के पाँच भेद- 1 विजय 2 वैजयन्त 3 जयंत 4 अपराजित और 5 सर्वार्थसिद्ध।

इस प्रकार 10 भवनपति, 15 परम अधार्मिक, 16 वाणव्यन्तर, 10 जृम्भक, 10 ज्योतिषी, 12 वैमानिक, 3 किल्विषिक, 9 लौकांतिक, 9 ग्रैवेयक और 5 अनुत्तर-वैमानिक। कुल मिलाकर 99 भेद हुए। इनके अपर्याप्त और पर्याप्त के भेद से देव के 198 भेद होते हैं। इस प्रकार जीवों के 14+48+303+198 = 563 भेद होते हैं।

अजीव राशि के 560 भेद

अरूपी अजीव के 30 भेद- धर्मास्तिकाय के तीन भेद-स्कन्ध (सम्पूर्ण वस्तु) देश (दो, तीन आदि भाग) प्रदेश (वस्तु का वह सूक्ष्म अंश जिसका दूसरा भाग नहीं हो सके) अधर्मास्तिकाय के तीन भेद- स्कन्ध, देश और प्रदेश। आकाशास्तिकाय के तीन भेद- स्कन्ध, देश और प्रदेश। ये 9 और कालद्रव्य का एक भेद, इस प्रकार 10 भेद हुए।

धर्मास्तिकाय के पाँच भेद- 1. द्रव्य 2. क्षेत्र 3. काल, 4. भाव, 5. गुण।

अधर्मास्तिकाय के पाँच भेद- 1. द्रव्य 2. क्षेत्र, 3. काल, 4. भाव, 5 गुण।

आकाशास्तिकाय के पाँच भेद- 1. द्रव्य 2. क्षेत्र, 3. काल, 4. भाव, 5 गुण।

काल द्रव्य के पाँच भेद- 1. द्रव्य 2. क्षेत्र, 3. काल, 4. भाव, 5 गुण। ये 20 और ऊपर के 10, ऐसे कुल 30 भेद हुए।

रुपी अजीव के 530 भेद

वर्ण पाँच- काला, नीला, लाल, पीला और सफेद। प्रत्येक के 2 गंध, 5 रस, 8 स्पर्श और 5 संस्थान, इन 20 भेदों से गुणा करने पर 20 X 5 = 100 भेद हुए।

गंध दो- सुगंध और दुर्गन्ध। प्रत्येक के 5 वर्ण, 5 रस, 8 स्पर्श और 5 संस्थान, इन 23 भेदों से गुणा करने पर 23 X 2 = 46 भेद हुए।

रस पाँच- तीखा, कड़वा, कषायला, खट्टा और मीठा। प्रत्येक के 5 वर्ण, 2 गंध, 8 स्पर्श, और 5 संस्थान। इन 20 भेदों से गुणा करने पर 20 X 5 = 100 भेद हुए।

स्पर्श आठ- खुरदरा, कोमल, हल्का, भारी, ठण्डा, गर्म, लुखा और चिकना। प्रत्येक के 5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस, 6 स्पर्श और 5 संस्थान। इन 23 भेदों से गुणा करने पर 23 X 8 = 184 भेद हुए।

संस्थान पाँच- 1. परिमण्डल (चूड़ी अथवा थाली के आकार का गोल), 2. वृत्त (लड्डू के आकार का गोल), 3. त्रिकोण (सिंघाड़े के समान), 4. चौकोण (चौकी, पट्टा आदि के समान), 5. आयत (डण्डे, बाँस आदि के समान)। प्रत्येक के 5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस और 8 स्पर्श। इन 20 भेदों से गुणा करने पर 20 X 5 = 100 भेद हुए।

इस प्रकार 100 + 46 + 100 + 184 + 100 = 530 भेद अरूपी अजीव के हुए। 30 + 530

= 560 भेद अजीव राशि के हुए।

(22) **बाईसवें बोले श्रावकजी के बारह व्रत –**

1. पहले अहिंसा व्रत में श्रावकजी त्रस जीव को संकल्प पूर्वक मारे नहीं, मरावे नहीं, मन, वचन और काया से।
2. दूसरे सत्य व्रत में श्रावकजी मोटा (स्थूल) झूठ बोले नहीं, बोलावे नहीं, मन वचन और काया से।
3. तीसरे अचौर्य व्रत में श्रावकजी स्थूल चोरी करे नहीं, करावे नहीं, मन, वचन और काया से।
4. चौथे परदार विवर्जन एवं स्वदार संतोष व्रत में श्रावकजी पर-स्त्री सेवन का त्याग करे और अपनी स्त्री की मर्यादा करे।
5. पाँचवें परिग्रह विरमण व्रत में श्रावकजी परिग्रह की मर्यादा करे।
6. छठे दिशा परिणाम व्रत में श्रावकजी छह (पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊँची और नीची) दिशा की मर्यादा करे।
7. सातवें उपभोग-परिभोग परिमाण व्रत में श्रावकजी छब्बीस बोलों की मर्यादा करे और पन्द्रह कर्मादान का त्याग करे।
8. आठवें अनर्थ-दण्ड विरमण व्रत में श्रावकजी अनर्थ-दण्ड का त्याग करे।
9. नौवें सामायिक व्रत में श्रावकजी प्रतिदिन शुद्ध सामायिक करे। (सामायिक का नियम रखे)।
10. दसवें देशावगासिक व्रत में श्रावकजी प्रतिदिन की अपेक्षा से दिशाओं की मर्यादा करे, संवर करे, चौदह नियम चितारें।
11. ग्यारहवें पौषधोपवास व्रत में श्रावकजी प्रतिपूर्ण पौषध करें।
12. बारहवें अतिथिसंविभाग व्रत में श्रावकजी श्रमण-निर्ग्रन्थों को प्रतिदिन चौदह प्रकार की निर्दोष वस्तुओं का दान देवे।

(23) **तेईसवें बोले साधुजी के पाँच महाव्रत-**

1. पहले महाव्रत में साधुजी महाराज, सर्वथा प्रकार से जीव की हिंसा करे नहीं, करावे नहीं और करते हुए को भला जाने नहीं मन, वचन और काया से (तीन करण और तीन योग से) जीवन पर्यन्त।
2. दूसरे महाव्रत मे साधुजी महाराज, सर्वथा प्रकार से झूठ बोले नहीं, बोलावे नहीं और बोलते हुए को भला जाने नहीं मन, वचन और काया से। जीवन पर्यन्त।
3. तीसरे महाव्रत में साधुजी महाराज, सर्वथा प्रकार से चोरी करे नहीं (बिना दी वस्तु लेवे नहीं), करावे नहीं, करते हुए को भला जाने नहीं, मन, वचन और काया से। जीवन पर्यन्त।
4. चौथे महाव्रत में साधुजी महाराज, सर्वथा प्रकार से मैथुन सेवे नही, सेवावे नहीं और सेवते हुए को भला जाने नहीं, मन, वचन और काया से। जीवन पर्यन्त।
5. पाँचवें महाव्रत मे साधुजी महाराज, सर्वथा प्रकार से परिग्रह रखे नही, रखावें नहीं और रखते हुए को भला जाने नहीं, मन वचन और काया से। जीवन पर्यन्त।

(24) **चौबीसवें बोले भंग 49 (ऊनपचास)–**

अंक 11 के भंग नौ। एक करण और एक योग से कहना, यथा (1-9)– 1. करूँ नहीं – मनसा,

2. करूँ नही - वयसा, 3 करूँ नहीं - कायसा, 4. कराऊँ नहीं - मनसा 5. कराऊँ नहीं - वयसा, 6 कराऊँ नहीं - कायसा, 7. अनुमोदूँ नहीं - मनसा, 8. अनुमोदूँ नहीं - वयसा, 9. अनुमोदूँ नहीं - कायसा।

अंक 12 के भंग नौ। एक करण और दो योग से कहना (10-18)- 10 करूँ नही - मनसा, वयसा, 11. करूँ नहीं - मनसा, कायसा, 12. करूँ नहीं - वयसा, कायसा, 13. कराऊँ नहीं - मनसा, वयसा 14. कराऊँ नहीं - मनसा, कायसा, 15. कराऊँ नहीं - वयसा, कायसा, 16. अनुमोदूँ नहीं - मनसा, वयसा, 17. अनुमोदूँ नहीं - मनसा, कायसा, 18. अनुमोदूँ नहीं - वयसा, कायसा।

अंक 13 के भंग तीन। एक करण और तीन योग से कहना (19-21)- 19 करूँ नहीं - मनसा, वयसा, कायसा, 20. कराऊँ नहीं - मनसा, वयसा, कायसा, 21. अनुमोदूँ नहीं - मनसा, वयसा, कायसा।

अंक 21 के भंग नौ। दो करण एक योग से कहना, (22-30)- 22. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं - मनसा, 23. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं - वयसा, 24. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं - कायसा, 25. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - मनसा, 26. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - वयसा, 27. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - कायसा, 28. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - मनसा, 29 कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - वयसा, 30. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - कायसा।

अंक 22 के भंग नौ। दो करण और दो योग से कहना (31-39)- 31. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं - मनसा, वयसा, 32. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं - मनसा, कायसा, 33. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं - वयसा, कायसा, 34. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - मनसा, वयसा, 35. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - मनसा, कायसा, 36. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - वयसा, कायसा, 37. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - मनसा, वयसा, 38. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - मनसा, कायसा, 39. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - वयसा, कायसा।

अंक 23 के भंग तीन। दो करण तीन योग से कहना (40-42)- 40. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं - मनसा, वयसा, कायसा, 41. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - मनसा, वयसा, कायसा, 42. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - मनसा, वयसा, कायसा।

अंक 31 के भंग तीन। तीन करण एक योग से कहना (43-45)- 43. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - मनसा, 44. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - वयसा, 45. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - कायसा।

अंक 32 के भंग तीन। तीन करण दो योग से कहना - (46-48)- 46. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - मनसा, वयसा, 47. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - मनसा, कायसा, 48. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - वयसा, कायसा।

अंक 33 का भंग एक। तीन करण तीन योग से कहना- 49. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं - मनसा, वयसा, कायसा।

(25) **पच्चीसवें बोले चारित्र पाँच-**

1. सामायिक चारित्र 2. छेदोपस्थापनीय चारित्र, 3. परिहारविशुद्धि चारित्र 4. सूक्ष्मसम्पराय चारित्र और 5. यथाख्यात चारित्र।

कथा/जीवनी विभाग-

भगवान पार्श्वनाथ

भगवान पार्श्वनाथ का समय ईसा पूर्व नवीं शताब्दी एवं भगवान महावीर से दो सौ पचास वर्ष पहले माना गया है।

पूर्व भव– प्रभु पार्श्वनाथ के दस प्रमुख पूर्व भव इस प्रकार हैं - प्रथम मरूभूति का भव, दूसरा हाथी का भव, तीसरा सहस्रार देव का, चौथा किरणदेव विद्याधर का, पाँचवाँ अच्युत देव का, छठा वज्रनाभ का, सातवाँ ग्रैवेयक देव का, आठवाँ स्वर्णबाहु का, नवमाँ प्राणत देव का और दसवाँ पार्श्वनाथ का।

तीर्थंकर गोत्र उपार्जन– प्रभु पार्श्वनाथ ने चक्रवर्ती स्वर्णबाहु के भव में तीर्थंकर जगन्नाथ के पास दीक्षा ग्रहण कर उग्र तपस्या आदि करते हुए तीर्थंकर गोत्र का उपार्जन किया।

जन्म– पार्श्वनाथ का जन्म काशी (वाराणसी) नरेश अश्वसेनजी की महारानी वामा देवी की कुक्षि से पोष कृष्णा दशमी को मध्यरात्रि के समय विशाखा नक्षत्र में हुआ।

नामकरण– जब पार्श्व गर्भ में थे, उस समय अन्धेरी रात्रि में पार्श्व की माता ने पार्श्व के पिता के पास से जाते हुए काले सर्प को देखकर सूचित किया तथा उन्हें प्राण-हानि से बचाया, अतः आपके पिता ने आपका नाम 'पार्श्वकुमार' रखा।

बाल्यावस्था– नीलकमल सी कान्ति वाले श्री पार्श्व बाल्यकाल से ही परम मनोहर और तेजस्वी प्रतीत होते थे। उनकी प्रतिभा और बुद्धि- कौशल को देखकर महारानी वामा और महाराज अश्वसेन परम सन्तुष्ट थे।

तरुणवय में, समर्थ होते हुए भी आपने राज्य पद स्वीकार नहीं किया। यद्यपि पार्श्वकुमार विवाह करने के इच्छुक नहीं थे, किन्तु वे महाराज अश्वसेन के अत्यन्त आग्रह को टालने में असमर्थ थे, इस कारण उन्होंने पितृ-वचन स्वीकार किया तथा पिता की इच्छानुसार कुशस्थल नगर के महाराज नरवर्मा की पुत्री प्रभावती के साथ विवाह कर लिया।

एक दिन पार्श्वकुमार राजभवन के झरोखे में बैठे हुए कुतूहल से वाराणसी नगरी की छटा निहार रहे थे। उस समय उन्होंने नर-नारियों को पत्र, पुष्पादि के रूप में पूजा की सामग्री लिये बड़ी उमंग से नगर के बाहर जाते देखा। जब उन्होंने इस विषय में सेवक से जिज्ञासा की तो ज्ञात हुआ कि नगर के बाहर उपवन में **'कमठ'** नाम के एक बहुत बड़े तापस आये हुए हैं। वे बड़े तपस्वी हैं और सदा पंचाग्नि तप (चारों दिशाओं में अग्नि लगाकर उसके बीच में स्वयं बैठना, अग्नि के ताप को सहन करना तथा पाँचवीं- सूर्य के ताप को सहना) करते हैं। यह मानव समुदाय उन्हीं की सेवा-पूजा के लिये जा रहा है।

सेवक की बात सुनकर कुमार भी कुतुहलवश तापस को देखने चल पड़े। वहाँ जाकर उन्होंने देखा कि तापस धूनी लगाये पंचाग्नि तप, तप रहा है। उसके चारों ओर अग्नि जल रही है और मस्तक पर सूर्य तप रहा है। झुण्ड के झुण्ड भक्त लोग आते हैं और विभूति का प्रसाद लेकर अपने आपको धन्य और कृतकत्य मानते हैं।

नाग का उद्धार– पार्श्व कुमार ने अपने अवधिज्ञान से जाना कि धूनी में जो लक्कड़ पड़ा है, उसमें एक बड़ा नाग (उत्तरपुराण के अनुसार नाग-नागिन का जोड़ा) जल रहा है। उसके जलने की घोर आशंका से कुमार का हृदय दयावश द्रवित (पिघलना) हो गया।

पार्श्व कुमार ने कमठ से कहा - "धर्म का मूल दया है, वह आग के जलाने में किस तरह संभव हो सकती है। क्योंकि अग्नि प्रज्वलित करने से सब प्रकार के जीवों का विनाश होता है। अहो! यह कैसा धर्म है जिसमें दया नहीं? बिना जल के नदी की तरह दया शून्य धर्म भी सार रहित है।"

पार्श्व कुमार की बात सुनकर तापस आग-बबूला हो उठा- "राजकुमार! तुम धर्म के विषय में क्या जानते हो? तुम्हारा काम हाथी-घोड़ों से खेलना है। धर्म का मर्म तो हम मुनि लोग ही जानते हैं। इतनी बात करते हो तो क्या इस धूनी में कोई जलता हुआ जीव बता सकते हो?

यह सुनकर राजकुमार ने सेवकों को अग्निकुण्ड में से लक्कड़ निकालने की आज्ञा दी। लक्कड़ आग से बाहर निकालकर सावधानीपूर्वक चीरा गया तो उसमें से जलता हुआ एक सर्प बाहर निकला। पार्श्व कुमार ने सर्प को पीड़ा से तड़फते हुए देखकर नवकार मंत्र सुनाया और प्रत्याख्यान दिलाकर उसे आर्त्त-रौद्र ध्यान से बचाया। शुभ भाव से आयु पूर्ण कर वह सर्प नागजाति के भवनवासी देवों में धरणेन्द्र नाम का इन्द्र हुआ।

इस तरह पार्श्वकुमार की कृपा से नाग का उद्धार हो गया। पार्श्वकुमार के ज्ञान और विवेक की सब लोग मुक्तकण्ठ से प्रंशसा करने लगे। तापस की प्रतिष्ठा कम हो गयी और लोग उसे धिक्कारने लगे। तापस मन ही मन पार्श्वकुमार से बहुत जलने लगा, पर कुछ कर न सका। अन्त में अज्ञान तप से आयु पूर्ण कर वह असुरकुमारों में मेघमाली नामक देव हुआ।

दीक्षा– पार्श्वकुमार सहज विरक्त थे। तीस वर्ष तक गृहस्थ जीवन में रहकर भी वे काम-भोग में आसक्त नहीं हुए। पार्श्वकुमार ने जिस समय संयम ग्रहण करने का संकल्प किया, उस समय लौकान्तिक देवों ने भी संयम अंगीकार करने तथा केवल्य प्राप्ति के पश्चात् धर्मतीर्थ प्रकट करने की प्रार्थना की।

वर्षीदान के उपरान्त पोष कृष्णा एकादशी को पार्श्वकुमार ने तेले की तपस्या पूर्वक तीन सौ पुरुषों के साथ गृहवास से निकल कर सर्व सावद्य त्यागरूप अणगार धर्म (दीक्षा) को स्वीकार किया। उसी समय प्रभु पार्श्व को मनःपर्याय ज्ञान प्राप्त हो गया।

एक बार पार्श्वनाथ प्रभु वटवृक्ष के नीचे कायोत्सर्ग में खड़े थे। सहसा कमठ के जीव ने जो मेघमाली असुर बना था, अपने ज्ञान से प्रभु को ध्यानस्थ देखा तो पूर्वभव के वैर की स्मृति होने से वह

भगवान पर बड़ा क्रोधित हुआ। वह तत्काल सिंह, चीता, मत्त हाथी, आशुविष बिच्छु और सर्प आदि के रूप बनाकर भगवान को अनेक प्रकार से कष्ट देने लगा। तदनन्तर उसने भयानक वैताल का रूप धारण कर प्रभु को अनेक प्रकार से डराने-धमकाने का प्रयास किया, परन्तु भगवान पार्श्वनाथ पर्वतराज की तरह अडोल एवं समत्व भाव से सब कुछ सहन करते रहे।

मेघमाली इससे और अधिक क्रुद्ध हुआ, उसने वैक्रिय शक्ति से भयंकर बादलों की गर्जना कर मूसलाधार वर्षा की। ओले गिरने लगे। जब वर्षा का पानी आपकी गर्दन के ऊपर तक आ गया तो नागराज धरणेन्द्र का आसन कम्पित हुआ। वह तुरन्त पद्मावती, वैराट्या आदि देवियों के साथ प्रभु की सेवा में उपस्थित हुआ। प्रभु को नमस्कार कर उनके चरणों के नीचे दीर्घनाल युक्त कमल की रचना की एवं प्रभु के शरीर को सातफणों के छत्र से अच्छी तरह ढँक दिया। भगवान देवकृत उस कमलासन पर समाधिलीन राजहंस की तरह शोभा पा रहे थे।

वीतराग भाव में पहुँचे भगवान पार्श्वनाथ कमठासुर की उपसर्ग लीला और धरणेन्द्र की भक्ति, दोनों पर समदृष्टि रहे। उनके हृदय में न तो कमठ के प्रति द्वेष था और न धरणेन्द्र के प्रति अनुराग। वे मेघमाली के उपसर्ग से किंचित्मात्र भी दुःखी नहीं हुए। इतने पर भी मेघमाली क्रोधवश वर्षा करता रहा तब धरणेन्द्र को अवश्य रोष आया और वह गरज कर बोला-दुष्ट! तू यह क्या कर रहा है? उपकार के बदले अपकार का पाठ तूने कहाँ पढ़ा है? तुम्हें नहीं मालूम कि ऐसी महान् आत्मा की अवज्ञा व आशातना करना, अग्नि को पैर से दबाने के समान दुखःप्रद है। इनका तो कुछ भी नहीं बिगड़ेगा, किन्तु तेरा सर्वनाश हो जायेगा। भगवान तो परम दयालु हैं, पर मैं इस तरह सहन नहीं करूँगा।

धरणेन्द्र की बात सुनकर मेघमाली भयभीत हुआ और अपनी माया तत्काल समेट कर, प्रभु के चरणों में सविनय क्षमा याचना करता हुआ अपने स्थान पर चला गया।

केवल ज्ञान– छद्मस्थ काल की 83 रात्रियाँ पूर्ण होने के पश्चात् 84वें दिन (चैत्र कृष्णा चतुर्थी) वाराणसी के निकट आश्रमपद उद्यान में घातकी वृक्ष के नीचे, तेले के तप के साथ ध्यानस्थ खड़े प्रभु ने सम्पूर्ण घाती कर्मों का क्षय कर केवलज्ञान-केवलदर्शन को प्रकट कर लिया। अहिंसा, सत्य, अचौर्य और अपरिग्रह रूप चातुर्याम धर्म का प्रवर्तन किया। चतुर्विध संघ की स्थापना की और वे 23वें तीर्थंकर कहलाये। लगभग 70 वर्ष तक भगवान पार्श्वनाथ ने देश-देशान्तर में विचरण किया और जैन-धर्म का उपदेश दिया। सौ वर्ष की आयु पूर्ण कर अन्त में श्रावण शुक्ला अष्टमी को सम्मेदशिखर पर योग मुद्रा में ध्यानस्थ खड़े प्रभु पार्श्वनाथ सिद्ध-बुद्ध और मुक्त हुए।

शिक्षाएँ–

(1) धार्मिक क्रियाएँ भी विवेक से करनी चाहिये।
(2) अज्ञान ही सब दुःखों का मूल है, अतः ज्ञान युक्त क्रियाएँ करें।
(3) तप, मात्र निर्जरा के लिए ही करें, प्रशंसा व प्रदर्शन के लिए नहीं।
(4) अज्ञान तप, कर्म बंधनों को काटने की अपेक्षा बढ़ाता है, अतः ज्ञानपूर्वक तप करें।

प्रार्थना विभाग -

ओम शान्ति शान्ति.....

ओम शान्ति शान्ति शान्ति, सब मिल शान्ति कहो.....2 **।।टेर।।**
विश्वसेन अचिरा के नंदन, सुमिरण है सब दुःख निकन्दन।
अहो रात्रि वंदन हो, सब मिल शान्ति कहो.....2 **।।1।।**
भीतर शान्ति बाहिर शान्ति, तुझमें शान्ति मुझमें शान्ति।
सब में शान्ति बसाओ, सब मिल शांति कहो.....2 **।।ओम।।2।।**
विषय कषाय को दूर निवारो, काम क्रोध से करो किनारो।
शान्ति साधना यों हो, सब मिल शान्ति कहो.....2 **।।3।।**
शान्ति नाम जो जपते भाई, मन विशुद्ध हिय धीरज लाई।
अतुल शान्ति उन्हें हो, सब मिल शान्ति कहो.....2 **।।4।।**
प्रातः समय जो धर्म स्थान में, शान्ति पाठ करते मृदु स्वर में।
उनको दुःख नहीं हो, सब मिल शान्ति कहो.....2 **।।5।।**
शान्ति प्रभु सम समदर्शी हो, करे विश्वहित जो शक्ति हो।
'गजमुनि' सदा विजय हो, सब मिल शान्ति कहो.....2 **।।6।।**

***रचयिता–* आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा.**

जरा कर्म देख कर करिये

जरा कर्म देख कर करिये, इन कर्मों की बहुत बुरी मार है।
नहीं बचा सकेगा परमात्मा, फिर औरों का क्या एतबार है।।टेर।।

बारह घड़ी तक बैलों को बान्धा, छींका लगा दिया दाने को।
बारह मास तक ऋषभ प्रभु को, आहार मिला नहीं खाने को।
इस युग के प्रथम अवतार हैं, बिन भोग्याँ न छूटे लार हैं। नहीं....

त्रिपृष्ट वासुदेव के भव में, दास के कानों में शीशा डला।
कर्म निकाचित बान्धा वीर ने, तीर्थंकर थे पर ना टला।
खड़े ध्यान में वन के मंझार हैं, दिये कानों में कीले डार हैं। नहीं....

सौतेली माँ बन सौत के सुत सिर, बाटिया चढ़ा के प्राण हरा।
निन्नाणु लाख भवों के बाद में, गजसुकुमाल बन कर्ज भरा।
चढ़ा सोमिल को क्रोध अपार है, डाले सिर पे धधकते अंगार हैं। नहीं...

किसी को मारे किसी को लूटे, काम करे अन्याई का।
जैसा करेगा, वैसा भरेगा, लेखा है राई राई का।
नहीं छोटे बड़े की दरकार है, चाहे कर ले तू जतन हजार हैं। नहीं....

पग पग में संयम रख तू वचन पे, बोले तो बोल भलाई का।
धर्म से प्रीत कर, कर्मों को 'जीत' कर, बन जा पथिक शिवराही का।
ये दुःख सुख भरा संसार है, यहाँ कर्मों का ही व्यापार है। नहीं....

***रचयिता*– श्री जीतमलजी चौपड़ा**

सामान्य विभाग-

ज्ञान प्राप्ति के बाधक कारण

उत्तराध्ययनसूत्र के ग्यारहवें अध्ययन में शिक्षा प्राप्ति के पाँच बाधक कारण बताये गए हैं -

अह पंचहिं ठाणेहिं, जेहिं सिक्खा न लब्भइ।
थंभा, कोहा, पमाएण, रोगेणालस्सएण य।।

-उत्तरा 11.3

अर्थात् शिक्षा-प्राप्ति में पाँच बाधक कारण हैं- 1. अभिमान, 2. क्रोध, 3.प्रमाद, 4. रोग एवं 5. आलस्य।

1. अभिमान–

शिक्षा प्राप्ति में अभिमान सबसे बड़ा बाधक तत्त्व है। अभिमानी व्यक्ति में सीखने की भावना का ही नाश हो जाता है। वह कुछ सीखे बिना ही अपने को बड़ा समझता रहता है। इसलिए उसमें विनय का भाव प्रकट नहीं होता। बिना विनयशीलता के ज्ञान नहीं आता।

2. क्रोध–

शिक्षा प्राप्ति में दूसरा बाधक कारण क्रोध है। जो बात-बात में बुरा मानता है एवं क्रोध करता रहता है वह भी सीखने का पात्र नहीं होता। उसमें सहनशीलता, गम्भीरता एवं क्षमाशीलता होनी चाहिए।

3. प्रमाद–

शिक्षाशील का तीसरा बाधक कारण प्रमाद है। प्रमाद समस्त पापों एवं अनर्थों का पोषक है। प्रमादी व्यक्ति विषय-भोगों के प्रति आकर्षित होकर अपने द्वारा अवश्यकरणीय कार्यों की उपेक्षा करता है। जिससे वह ज्ञानाराधन में भी प्रवृत्त नहीं हो पाता। उसे मौज-शौक ही भाते हैं, ज्ञान की बातें बोझ लगती हैं। जिसे ज्ञान में रुचि है, वह प्रमाद को त्याग कर ज्ञान-सीखने को प्राथमिकता देता है।

4–5. रोग और आलस्य–

शिक्षा शील बनने में अन्य बाधक कारण हैं- रोग एवं आलस्य। शारीरिक एवं मानसिक रोग भी अध्ययन में बाधक बन जाते हैं, समस्त अनुकूलताएँ होते हुए भी जो अध्ययन के काल को टालता रहता है, वह आलसी है। आलस के रहते हुए भी अध्ययन नहीं होता। अतः इनसे बचते हुए जीवन जीने पर ज्ञानवर्द्धन होता है एवं निरन्तरता बनी रहती है।

महापापी

1.	आत्मघाती	महापापी
2.	विश्वास घाती	महापापी
3.	गुरु-द्रोही	महापापी
4.	कृतघ्नी (उपकारी को भूलने वाला)	महापापी
5.	झूठी सलाह देने वाला	महापापी
6.	झूठी साक्षी देने वाला	महापापी
7.	हिंसा में धर्म बताने वाला	महापापी
8.	सरोवर की पाल तोड़ने वाला	महापापी
9.	दव (आग) लगाने वाला	महापापी
10.	हरा-भरा वन काटने वाला	महापापी
11.	बाल-हत्या करने वाला	महापापी
12.	सती-साध्वी का शील भंग करने वाला	महापापी

यतना-स्वरूप, आवश्यकता, महत्त्व एवं लाभ

यतना शब्द का सामान्य अर्थ है- सावधानी। सजगता, विवेक, उपयोग आदि इसके पर्यायवाची शब्द हैं। यतना धर्म का मूल है। यतना में ही धर्म रहा हुआ है। यदि यतना नहीं तो धर्म नहीं। यतना पापों से बचने का साधन है। यतना, आत्मगुणों को काम, क्रोध आदि लुटेरों से बचाने का साधन है। यतना, आस्रव द्वारों को रोकने का भी अमोघ उपाय है। यतना के बिना चारित्र, चारित्र नहीं होता।

यतना की आवश्यकता एवं महत्त्व–

अयतना जैसे पाप पैदा करती है वैसे यतना पापकर्म से बचाने वाली है। अपने दैनिक जीवन में यतना से क्रिया करने से शुभ भाव उत्पन्न होते हैं तथा पाप कर्म का बन्ध नही होता है।

यतना, विवेक का ही पर्यायवाची है। यतना मोक्ष देने वाली है। यतना पापों का नाश करने वाली हैं। यतना सम्यक्त्व की निर्मलता एवं चारित्र की निर्दोषता का कारण है। यतना पूर्वक सांसारिक कार्य करते हुए व्यक्ति अल्प कर्मों का बंध करता है। यतना पूर्वक कार्य करने से व्यक्ति अनर्थ दण्ड से बच जाता है। यदि रसोई बनाती हुई बहन रसोई कार्य में यतना रखे तो अनेक पापों से बच सकती है। उसी प्रकार अन्य सांसारिक कार्य करते हुए भी हम विवेक व यतना रखें तो अपनी आत्मा को पाप के भार से बचा सकते हैं।

जीवन को सुख पूर्वक जीने के लिए, आत्म-गुणों के रक्षण के लिए तथा मानसिक शान्ति के लिए जीवन में यतना का महत्त्व सर्वोपरि है। यतना पूर्वक किसी भी कार्य को करने से कार्य सम्यग् प्रकार से सम्पन्न होता है। समय एवं श्रम की बचत होती है। यतना का महत्त्व बतलाते करते हुए दशवैकालिक सूत्र में कहा गया है–

जयं चरे, जयं चिट्ठे, जयं आसे जयं सये।
जयं भुंजंतो भासंतो, पावं कम्मं न बंधइ।। *4/8*

अर्थात् यतना पूर्वक चलें, यतना पूर्वक खड़े रहें, यतना पूर्वक बैठें, यतना पूर्वक सोएँ तथा यतना पूर्वक खायें व बोलें तो पाप कर्मों का बंध नही होता है। इस प्रकार यतना पूर्वक कार्य करने से पाप कर्मों का बंध नहीं होता है। यतना सम्यक्त्व को सुरक्षित रखने का उपाय भी है। सम्यग् रूप से चारित्रधर्म का पालन करने के लिए यतना का महत्त्व सबसे अधिक है।

यतना से लाभ–

1. यतना पूर्वक कार्य करने से व्यक्ति अनेक प्रकार की कठिनाइयों से बच जाता है।
2. यतना पूर्वक कार्य करने से समय की बचत होती है।
3. यतना पूर्वक कार्य करने से पाप कर्मों का बंध नहीं होता है।
4. यतना पूर्वक बोलने से व्यक्ति कलह से बच जाता है।
5. यतना से सम्यग् चारित्र का पालन होता है, जिससे संयम में दृढ़ता आती है।
6. यतना पूर्वक कार्य करने से मानसिक शान्ति प्राप्त होती है।
7. यतना देव-गुरु-धर्म की सही श्रद्धा को निर्मल बनाती है।

8. यतना चारित्र को दूषित होने से बचाती है।
9. यतना पूर्वक सांसारिक कार्य करने से पर्वत जितने पाप राई जितने हो जाते हैं।

अयतना से हानियाँ–

1. अयतना से गमनागमन करने वाला व्यक्ति त्रस एवं स्थावर जीवों की हिंसा करता है। अगल-बगल में देखने पर अथवा बात करते हुए चलने पर वह बराबर ध्यान नहीं रख पाता, जिससे आने वालों से टकरा जाना, ठोकर खाना और जीव-जन्तु पर पैर पड़ना भी सम्भव है। जीवों की हिंसा के कारण पाप कर्म का बन्ध होता है तथा वह बन्ध, कटुफल देने वाला होता है।
2. अयतना से खड़ा होने वाला सचित्त पृथ्वी, पानी, वनस्पति आदि की यतना नहीं कर सकेगा। इधर-उधर वर्जित स्थानों की तरफ देखने से, हाथ-पैर-आँख आदि की चंचलता करने से भी छोटे-बड़े जीवों की हिंसा संभव है, जो पाप कर्मो का बन्ध कराने के साथ ही कटुफलदायक भी होती है।
3. अयतना से बिना देखे, पूँजे जीव-जन्तु वाले स्थान पर बैठना हाथ-पैर आदि अंग-उपांगों की चंचलता करते हुए बैठना, अस्थिर आसन पर बैठना भी अनेक जीवों की हिंसा का कारण बनता है।
4. अयतना पूर्वक सोना, अधिक सोना, आसन, शय्या आदि बिना देखे, बिना पूँजे काम में लेना, करवटें बदलना आदि भी अनेक जीवों की हिंसा का कारण बनता है।
5. अयतना पूर्वक भोजन करना, मर्यादा से अधिक, भूख से अधिक खाना, विकार बढ़ाने वाला आहार करना, सजीव वस्तु का भक्षण करना, इधर-उधर गिराते हुए, जूठन डालते हुए खाना भी अनेक जीवों की हिंसा का कारण बनता है।
6. अयतना से, अविधि से बोलना, कठोर, कर्कश व मर्मभेदी वचन बोलना, दूसरों की निन्दा करना भी प्राणियों की हिंसा का कारण बनता है।

अतः यतना के स्वरूप को भली-भाँति समझकर प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन की प्रत्येक प्रवृत्ति में यतना का पालन करने का लक्ष्य रखना चाहिये।

नमूने का प्रश्न-पत्र (उत्तर सहित)

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर

कक्षा : द्वितीय – जैन धर्म प्रवेशिका परीक्षा

समय : 3 घण्टे **अंक : 100**

प्र.1 निम्नलिखित प्रश्नों में से सही उत्तर का क्रमाक्षर कोष्ठक में लिखिए :- 10x1=(10)

(a) अस्थिर आत्माओं को धर्म में स्थिर करते हैं-
(क) अरिहंत (ख) उपाध्याय
(ग) आचार्य (घ) सिद्ध (ख)

(b) सामायिक का समापन सूत्र है-
(क) करेमि भंते (ख) लोगस्स
(ग) एयस्स नवमस्स (घ) णमोत्थुणं (ग)

(c) कायोत्सर्ग की काल मर्यादा है-
(क) निश्चित नहीं (ख) 1 मुहूर्त्त
(ग) 48 मिनिट (घ) 1 घड़ी (क)

(d) श्री पुष्पदन्त जी कौनसे तीर्थंकर का दूसरा नाम है-
(क) आठवें (ख) सातवें
(ग) दसवें (घ) नवमें (घ)

(e) अंक 21 के भंग हैं-
(क) 9 (ख) 6
(ग) 3 (घ) 5 (क)

(f) दूसरे की चुगली करना पाप है-
(क) अभ्याख्यान (ख) पैशुन्य
(ग) कलह (घ) परपरिवाद (ख)

(g) आदित्य किस जाति का देव है -
(क) भवनपति (ख) ज्योतिषी
(ग) लोकन्तिक (घ) वैमानिक (ग)

(h) अरूपी अजीव के भेद हैं -
(क) 30 (ख) 12
(ग) 60 (घ) 96 (क)

(i) पार्श्वनाथ का विवाह किसके साथ हुआ -
(क) श्री मृगावती (ख) श्री प्रभावती
(ग) श्री कर्मावती (घ) श्री धर्मावती (ख)

(j) शिक्षा प्राप्ति में बाधक कारण नहीं है-
(क) धन (ख) अभिमान
(ग) प्रमाद (घ) रोग (क)

प्र.2 निम्न प्रश्नों के उत्तर 'हाँ' अथवा 'नहीं' में दीजिए :- 10x1=(10)

(a) कायोत्सर्ग के 12 आगार होते हैं। (हाँ)
(b) पाठ को अशुद्ध बोलना निरपेक्ष दोष है। (नहीं)
(c) सिद्ध भगवान सशरीरी नहीं होते हैं। (हाँ)
(d) विराधना 10 प्रकार की होती हैं। (हाँ)
(e) आचार्य 25 गुणों के धारक होते हैं। (नहीं)
(f) निर्जरा के 10 भेद नहीं होते हैं। (हाँ)
(g) ज्योतिषी देवों का 1 दण्डक होता है। (हाँ)
(h) अशुभ योग प्रवर्त्तावे तो संवर होता है (नहीं)
(i) संस्थान पाँच होते हैं। (हाँ)
(j) मिथ्यात्व के दस प्रकार होते हैं। (हाँ)

प्र.3 जोड़ी मिलानः - 10x1=(10)

(a)	प्रणिपात सूत्र	-	आत्मा	शक्रस्तव
(b)	देश	-	ग्रैवेयक	कथा
(c)	ज्ञान	-	पुण्य	आत्मा
(d)	ण सोहियं	-	संज्ञा	अतिचार
(e)	त्रिकोण	-	शक्रस्तव	संस्थान

(f)	भय	-	अतिचार	संज्ञा
(g)	वस्त्र	-	संस्थान	जृंभक
(h)	देवयं	-	कथा	चेइयं
(i)	वचन	-	जृंभक	पुण्य
(j)	आमोह	-	चेइयं	ग्रैवेयक

प्र.4 मुझे पहचानो : - 10x1=(10)

(a)	मैं आठ कर्मों से मुक्त निरंजन निराकार हूँ।	सिद्ध
(b)	मैं शरीर को स्थिर, वचन को मौन तथा मन को एकाग्र रखकर किया जाता हूँ।	कायोत्सर्ग
(c)	मेरे उच्चारण से सभी पापों का नाश होता है।	नवकार मंत्र
(d)	मैं 27 गुणों का धारक हूँ।	साधु
(e)	मुझे प्राकृत भाषा में णमोक्कार कहते हैं।	नमस्कार
(f)	मेरा गुण स्थिर गुण है।	अधर्मास्तिकाय
(g)	मैं दसवाँ भवनपति देव हूँ।	स्तनितकुमार
(h)	मेरे 18 भेद हैं।	पापस्थान
(i)	मैं श्रावक का ग्यारहवाँ व्रत हूँ।	पौषधोपवास व्रत
(j)	मेरे 563 भेद हैं।	जीव राशि

प्र.5 एक-दो वाक्यों में उत्तर दीजिए :- 12x2=(24)

(a) गुरु किसे कहते हैं ?

उ. संसार के प्राणिमात्र के मन में अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करके ज्ञान रूपी प्रकाश को फेलाने वाले गुरु कहलाते हैं।

(b) निदान दोष का अर्थ लिखिए।

उ. भविष्य के सुख की कामना करना निदान दोष है।

(c) तिक्खुत्तो के पाठ का दूसरा नाम क्या है ?

उ. गुरु वन्दन सूत्र।

(d) सामायिक व्रत कितने करण व कितने योग से ग्रहण किया जाता है ?

उ. 2 करण (पाप स्वयं नहीं करना और दूसरों से नहीं कराना) और 3 योग (मन,वचन, काया) से किया जाता है।

(e) रत्नत्रय कौन-कौन से हैं ?

उ. 1. सम्यक् ज्ञान, 2. सम्यक् दर्शन, 3. सम्यक् चारित्र।

(f) दूसरा णमोत्थुणं बोलने पर 'ठाणं संपत्ताणं' के स्थान पर क्या बोला जाता है ?

उ. 'ठाणं संपाविउकामाणं' बोला जाता है।

(g) छह लेश्या के नाम लिखिए।

उ. 1. कृष्ण लेश्या, 2. नील लेश्या, 3. कापोत लेश्या, 4. तेजो लेश्या, 5. पद्म लेश्या, 6. शुक्ल लेश्या।

(h) नव तत्त्व के नाम लिखिए।

उ. 1. जीव तत्त्व, 2. अजीव तत्त्व, 3. पुण्य तत्त्व, 4. पाप तत्त्व, 5. आश्रव तत्त्व, 6. संवर तत्त्व, 7. निर्जरा तत्त्व, 8. बंध तत्त्व और 9. मोक्ष तत्त्व।

(i) भगवान पार्श्वनाथ का जन्म कब व कहाँ हुआ था ?

उ. पार्श्वनाथ का जन्म काशी (वाराणसी) नरेश अश्वसेनजी की महारानी वामादेवी की कुक्षि से पोष कृष्णा दशमी को मध्यरात्रि के समय विशाखा नक्षत्र में हुआ।

(j) भगवान पार्श्वनाथ से कौनसे देवों ने संयम अंगीकार करने की प्रार्थना की ?

उ. लौकान्तिक देवों ने संयम अंगीकार करने की प्रार्थना की।

(k) भगवान पार्श्वनाथ ने किस धर्म का प्रवर्तन किया ? उसके भेदों के नाम भी लिखिए

उ. चातुर्याम धर्म का प्रवर्त्तन किया। भेद-1. अहिंसा, 2. सत्य, 3. अचौर्य, 4. अपरिग्रह।

(l) भगवान महावीर ने दास के कानों में शीशा किस भव में डाला ? उसका उन्हें क्या फल भोगना पड़ा ?

उ. भव- त्रिपृष्ठ वासुदेव के भव में। फल- कानों में कीले डाले।

प्र.6 निम्न प्रश्नों के उत्तर दो-तीन वाक्यों में लिखिए : - 12x3=(36)

(a) पर्युपासना से क्या लाभ हैं ?

उ. सम्यग्चारित्र पालने वाले श्रमण-निर्ग्रन्थों की पर्युपासना करने से अशुभ कर्मों की निर्जरा होती है और महान् पुण्य का उपार्जन होता है।

(b) इरियावहिया के पाठ का क्या प्रयोजन है ?

उ. 'आलोचना सूत्र' या 'इरियावहिया' के पाठ से गमनागमन के दोषों की शुद्धि की जाती है। गमनागमन करते हुए प्रमादवश यदि किसी जीव को पीड़ा पहुँची हो, तो इसके द्वारा खेद प्रकट किया जाता है।

(c) काया के अंतिम 6 दोषों को स्पष्ट कीजिए।

उ. 7. आलस्य दोष- अंग मोड़ना।
8. मोटन दोष- हाथ पैर की अंगुलियों का कड़का निकालना।
9. मल दोष- मैल उतारना।
10. विमासन- गले या गाल पर हाथ लगाकर शोकासन से बैठना।
11. निद्रा- निद्रा लेना।
12. वैयावृत्त्य- बिना कारण दूसरों से वैयावृत्त्य-सेवा कराना।

(d) राग-द्वेष किसे कहते हैं?

उ. अनुकूल व्यक्ति, वस्तु अथवा परिस्थिति को पाकर प्रसन्न होना 'राग' कहलाता है। जबकि प्रतिकूल व्यक्ति, वस्तु, परिस्थिति को पाकर अप्रसन्न होना 'द्वेष' कहलाता है।

(e) नवकार मंत्र मंगल रूप क्यों है?

उ. नवकार मंत्र से पाप का क्षय होता है, पाप रूकते हैं, इसीलिए नवकार मंत्र मंगल रूप है।

(f) साधुजी का तीसरा महाव्रत लिखिए।

उ. तीसरे महाव्रत में साधुजी महाराज, सर्वथा प्रकार से चोरी करे नहीं (बिना दी वस्तु लेवे नहीं), करावें नहीं, करते हुए को भला जाने नहीं, मन, वचन और काया से। जीवन पर्यन्त।

(g) अंक 22 के भंग लिखिए।

उ. अंक 22 के भंग नौ। दो करण और दो योग से कहना (31-39)- 31. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं- मनसा, वयसा, 32. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं-मनसा, कायसा, 33. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं- वयसा, कायसा, 34. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं- मनसा, वयसा, 35. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा, कायसा, 36. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-वयसा, कायसा, 37. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा, वयसा, 38. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं- मनसा, कायसा, 39. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं- वयसा, कायसा।

(h) भगवान पार्श्वनाथ की जीवनी से मिलने वाली 3 शिक्षाएँ लिखिए।

उ. 1. धार्मिक क्रियाएँ भी विवेक से करनी चाहिये। 2. अज्ञान ही सब दुःखों का मूल है, अतः ज्ञान युक्त क्रियाएँ करें। 3. तप, मात्र निर्जरा के लिए ही करें, प्रशंसा व प्रदर्शन के लिए नहीं। 4. अज्ञान तप, कर्म बंधनों को काटने की अपेक्षा बढ़ाता है, अतः ज्ञानपूर्वक तप करें। (इनमें से कोई तीन)

(I) महापापी के प्रथम 6 भेद लिखिए।

उ. 1. आत्मघाती, 2. विश्वासघाती, 3. गुरु-द्रोही, 4. कृतघ्नी (उपकारी को भूलने वाला), 5. झूठी सलाह देने वाला, 6. झूठी साक्षी देने वाला।

(j) यतना से होने वाले कोई तीन लाभ लिखिए।

उ. 1. यतना पूर्वक कार्य करने से व्यक्ति अनेक प्रकार की कठिनाइयों से बच जाता है।
2. यतनापूर्वक कार्य करने से समय की बचत होती है।
3. यतना पूर्वक कार्य करने से पाप कर्मों का बंध नहीं होता है।
4. यतना पूर्वक बोलने से व्यक्ति कलह से बच जाता है।
5. यतना से सम्यग् चारित्र का पालन होता है, जिससे संयम में दृढ़ता आती है।
6. यतना पूर्वक कार्य करने से मानसिक शान्ति प्राप्त होती है।
7. यतना देव-गुरु-धर्म की सही श्रद्धा को निर्मल बनाती है।
8. यतना चारित्र को दूषित होने से बचाती है।
9. यतना पूर्वक सांसारिक कार्य करने से पर्वत जितने पाप राई जितने हो जाते हैं।
(इनमें से कोई तीन)

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए : -

(k) पग-पग में संयम रख तू वचन पे, बोले तो बोल भलाई का।
धर्म से प्रीत कर, कर्मों को 'जीत' कर, बन जा पथिक शिवराही का।
ये दुःख सुख भरा संसार है, यहाँ कर्मों का ही व्यापार है।

(l) प्रातः समय जो धर्म स्थान में, शान्ति पाठ करते मृदु स्वर में।
उनको दुःख नहीं हो, सब मिल शान्ति कहो।